THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180481

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83 S53N Accession No. 3766

Author शुक्ल शत्रुघ्न प्रसाद

Title भागमणि .

This book should be returned on or before the date last marked below.

नागमणि

(ऐतिहासिक उपन्यास)

★

उपन्यासकार

शत्रुघ्न लाल शुक्ल

★

प्रकाशक

प्रत्यूष प्रकाशन, कानपुर

प्रकाशक ... प्रत्यूष प्रकाशन, रामबाग, कानपुर।
लेखक ... ... शत्रुघ्न लाल शुक्ल
प्रकाशन काल १९६१
मूल्य ... ... २—०—०
आवरण चित्रकार ... श्री बी० के० डे
मुद्रक ... वाणी मुद्रण कार्यालय, कानपुर।

आत्म–निवेदन

उस प्रदेश की भूमि जिसे आज राजस्थान कहते हैं, चिरकाल से अनेक राजपरिवारों की कीड़ा स्थली रही है। कुछ के नाम इतिहासकारों ने खोज लिये हैं, कुछ आज भी लुप्त हैं, किंतु वहां का कण-कण अपने अस्तित्व में एक न एक गौरव गाथा आत्मसात् किये पड़ा है।

उसी राजस्थान की एक पूर्व मध्यकालीन राजकुमारी का ऐतिहासिक चित्र मेरे मस्तिष्क में अंकित हुआ। उस पर मैंने एक छोटी सी कथा लिखी। किंतु संतोष न हुआ। फिर उसके जीवन वृत्त को विस्तृत करने का प्रयास किया। यही इस पुस्तक का आधार और पृष्ठभूमि है।

कथानक सर्वथा मौलिक होकर भी संभावित है। इसका अंत दुखद है। किंतु अपने ब्रह्म का विरोध मैं न कर सका। भारतीय नारी का प्रणय चिरकाल से आदर्श रहा है। अतः राजकुमारी नागमणि के विशुद्ध प्रणय एवं आत्मोत्सर्ग की पावन भावना को लेखनी द्वारा विकृत करना मैंने उचित नहीं समझा।

भाषा, शैली और प्रवाह जैसा भी है, समक्ष प्रस्तुत है।

उन विभूतियों के प्रति जिनसे मुझे समय समय पर अमूल्य परामर्श एवं साहित्यिक चिन्तन की प्रेरणा मिलती रही है नत मस्तक आभारी हूँ। इस पुस्तक के गुणों में उनकी प्रेरणा है और दोषों में मेरा निजी प्रमाद और दंभ।

शत्रुघ्नलाल शुक्ल

समर्पण

श्री पं० जगमोहन नाथ जी अवस्थी, आशुकवि, साहित्यमनीषी
के कर कमलों में:—

दादा !

आपका स्नेह-जल पाकर एक म्रियमाण अंकुर अल्पकाल में ही छोटा सा पौधा हो चला। यह 'नागमणि' उसी का प्रथम पुष्प है निर्गन्ध एवं सर्वथा अप्रयोजनीय। किंतु विश्वास है कि इसे उसी प्रकार स्वीकार कर लेंगें जैसे भगवान शिव धतूर-पुष्प को।

अनुगत—

शत्रुघ्नलाल

१

सुसज्जित सभाभवन के मध्य स्फटिक की चौकी पर रत्नजटित सिंहासन रखा हुआ था। मन्त्री, सहायक, नायक एवं विभिन्न विभागों के कर्मचारी उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे थे। वातावरण नीरव, निस्तब्ध और शान्त था। तभी प्रतिहारी ने सूचना दी—'महाराज पधार रहे हैं।' सब सतर्क हो गये। क्षणेक में ही पूर्वीय कक्ष का द्वार खुला और मालव-नरेश अरिन्दम ने सभाभवन में प्रवेश किया। सभासद्‌गण स्वागतार्थ ससम्मान खड़े हो गये। राजपुरोहित ने स्वस्ति-वाचन किया और महाराज सबकी अभ्यर्थना स्वीकार करते हुए सिंहासनासीन हुए। सभ्यों ने भी अपने-अपने आसन ग्रहण किये। प्रधान मन्त्री केदारदेव ने महाराज के समीप खड़े होकर नतमस्तक निवेदन किया—

"देव, आज्ञानुसार प्रजा की चिकित्सार्थ दस नये औषधालय खुल चुके हैं। निर्माण विभाग ने इस वर्ष के सातवें राजपथ का अर्धभाग पूर्ण कर लिया है। गुरुकुलों के स्नातक

नवीन पाठशालाओं में शिक्षण कार्य कर रहे हैं। कृषि विशेषज्ञों ने कीटनाशन में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त करके इस वर्ष के अन्नोत्पादन में पर्याप्त वृद्धि की हैं। शासन और सैन्य-व्यवस्था भी सन्तोषजनक है। केवल एक ऐसा विषय उत्पन्न हो गया है जो जन सामान्य की चिन्ता का कारण बन रहा है।"

महाराज के साथ ही सारी सभा चकित हो उठी। आशंका की एक क्षीणतम छाया सबकी मुखाकृति पर आई और गयी। सदस्य जिज्ञासु हो उठे—वह चिन्ताजनक विषय क्या होगा

महाराज ने प्रश्न किया—"मन्त्रिवर, मैं शासन की सफलता का गुणगान नहीं सुनना चाहता। वह तो प्रत्येक राज्य की आवश्यक और सुलभतम स्थिति होती है। मुझे उस चिंताजनक विषय से अवगत करो। आशंका है कि कहीं विलम्ब होने से वह मेरी प्रजा के अनिष्ट का कारण न बन जाये। उत्तम होता—आप सर्वप्रथम उसी को प्रस्तुत करते।"

महामन्त्री के संकेत पर एक चर करबद्ध होकर महाराज के सम्मुख उपस्थित हुआ। अभिवादन स्वीकार कर महाराज ने प्रश्नसूचक दृष्टि से उसकी ओर देखा।

मन्त्री केदारदेव ने निवेदन किया—"महाराज, यह नर्मद प्रदेश का प्रधान गुप्तचर है। अपने क्षेत्र में कुछ उपद्रवी तत्वों द्वारा अशान्ति उत्पन्न किये जाने की सूचना देने आया है। जैसी आज्ञा हो।"

महाराज चर से परिचित थे। पूछा–'गोवर्धन, नर्मद प्रदेश की अशान्ति का मूल कारण क्या है। उसके शमन हेतु तुम्हें किस प्रकार की सहायता की आवश्यकता है? निस्संकोच बताओ।

गुप्तचर गोवर्धन ने सादर नतमस्तक होकर निवेदन किया–"महाराज, आपकी कृपा और प्रताप से अभी तक प्रजा को किसी प्रकार के कष्ट अथवा असुविधा का अनुभव नहीं हो सका। प्रत्येक आवश्यकता पर राज्य की ओर से सामयिक एवं सम्भव सहायता प्रदान की जाती रही है। किन्तु इधर थोड़े समय से एक आशंका सी जनजीवन में व्याप्त हो चली है। कालकेतु नामक दस्यु के उपद्रवों ने क्षेत्रीय जनता को संत्रस्त कर रखा है। उसका दल इतना संगठित है कि नर्मद सेनापति भी उसे बन्दी बनाने में अक्षम हो रहे हैं। अपनी सफलता से प्रोत्साहित होकर उसने और भी बर्बरतापूर्वक अनाचार एवं आक्रमण प्रारम्भ कर दिये हैं। यदि राजधानी से शीघ्र ही उसके दमन का उपाय न किया गया तो सम्भव है नर्मद प्रदेश की सत्ता को वह हस्तगत कर ले।

महाराज के सस्तक पर रेखायें अंकित हो गयीं। क्रोध और असन्तोष की मुद्रा स्पष्ट हो उठी। स्मृति पर बल देते हुए कहा—"कालकेतु, कौन कालकेतु? आज से पूर्व यह नाम कभी नही सुनाई पड़ा। सहसा इतना शक्ति सम्पन्न उपद्रवी कहाँ से आ गया कि उसका दमन करने में नर्मद सेनाध्यक्ष भी असफल हो रहे हैं।"

"देव, ऐसा प्रतीत होता है कि अभी तक यह दस्यु-दल केवल अपना संगठन ही करता रहा है। आक्रमणों एवं उत्पात का आरम्भ अभी थोड़े ही समय से हुआ है। किन्तु उसकी संगठन शक्ति और अनुशासन इतना प्रबल है कि नर्मद सेना उसे पराजित नहीं कर पा रही है। पर्वतीय क्षेत्र होने के कारण वहाँ दस्युओं को वानर-प्रणाली के युद्ध में विशेष सफलता मिल जाती है। नर्मद सेना में बानरी-युद्ध के प्रशिक्षित सैनिक नहीं हैं, अतः मुझे आपकी सेवा में भेजकर सेनानायक ने निवेदन किया है कि युद्ध की स्थिति और दस्युओं के आतंक पर अधिकार करने की समुचित व्यवस्था प्रदान की जाये।

क्षण भर मौन रह कर महाराज ने गम्भीर स्वर में कहा—'निश्चित रहो। अरिन्दम के शरीर में रक्त का एक भी कण जब तक शेष है, वह अपनी प्रजा की रक्षा में तत्पर रहेगा। मैं शीघ्र ही बानरी युद्ध के विशेषज्ञों को नर्मद प्रदेश जाने की आज्ञा दूंगा। क्या तुम यह बता सकते हो कि उस दस्यु ने लगभग कितनी सम्पत्ति की हानि की होगी, ताकि राजकोष से उसकी क्षतिपूर्ति हेतु धन भेजा जा सके!

गोबर्धन ने सविनय निवेदन किया—"सहाराज, यदि क्षमा मिले तो निवेदन करूंगा कि उपद्रवी कालकेतु के अत्याचारों से हुई क्षति की पूर्ति असम्भव है। यदि केवल धन तक ही उसकी शनि दृष्टि सीमित होती तो कुछ भार उठाया भी जा सकता था, किन्तु अगणित पशुओं का वध, निरपराध ग्रामीणों की हत्या, नारियों पर अनाचार और बालकों का अपहरण

जैसी भीषण क्षति किस प्रकार पूर्ण की जा सकेगी ! उस आततायी ने कितने ही धनिकों के शिशुओं का अपहरण कर लिया है और अब उन्हें मुक्त करने में सहस्रों की धनराशि माँग रहा है। अनेक बड़े–बड़े व्यवसायी उसके आक्रमण से राह के भिखारी हो गये हैं। जहां कहीं नागरिकों ने प्रतिरोध किया था, उसके सहयोगियों ने आबाल बृद्ध हत्यायें कीं। न जाने कितनी मातायें और बहनें आज उस अत्याचारी को शाप दे रही हैं, किन्तु जान पड़ता है उसने कोई रक्षा कवच धारण कर लिया है। राजकीय सेना, नागरिक संगठन और युवक दल सभी उससे पराजित हो चुके हैं। धन जन की भीषण हानि उठा कर अब वहां की जनता का आत्मबल क्षीण हो चला है और सम्भावना तो यहां तक है कि यदि शीघ्र ही कोई निदान न किया गया तो नर्मद क्षेत्र कालकेतु के समक्ष आत्म–समर्पण कर देगा।''

पराजय के उस जघन्यतम रूप, प्रतिष्ठा की इस विकृति और कीर्ति पर कालिमा की इस आशंका ने सभाभवन को स्तब्ध कर दिया। एक क्षण के लिये जान पड़ा—मालव नरेश के यशः सूर्य पर राहु की छाया पड़ रही है। तभी महाराज के शरीर में प्रकम्पन हुआ। अधर प्रस्फुटित हो उठे। नेत्रों में अरुणिमा व्याप्त हो गई और स्वभावतः उनका दाहिना हाथ कृपाण पर जा पड़ा। मेघ गर्जन के स्वर में उन्होंने कहा—''गोबर्धन, तुम राज्य के गुप्तचर हो, अतः वस्तुस्थिति को स्पष्ट करने की तुम्हें पूर्ण स्वतन्त्रता है। अन्यथा किसी

दूसरे के मुख से मैं अपने राज्य में इतनी अव्यवस्था नहीं सुन सकता था। अस्तु, जाओ, विश्राम करो। मैं शीघ्र ही तुम्हारे साथ पर्याप्त सेना भेजूंगा जो उस दुष्ट कालकेतु के अत्याचारों का अन्त कर देगी।

गुप्तचर ने नतमस्तक होकर आश्वासन ग्रहण किया और अपने स्थान पर आ बैठा। सभा में फिर कोई अन्य विषय प्रस्तुत न किया जा सका। कालकेतु ही सबकी शंका चिन्ता और समस्या का एकमात्र केन्द्र बन गया। नरेश अरिन्दम ने महामन्त्री, सेनापति और राजपुरोहित के साथ विचार विमर्श करके घोषणा की—'नर्मद क्षेत्र के उपद्रवी दस्यु कालकेतु को बन्दी बनाने वाला वीर राज्य की ओर से "महावीर चक्र" पदक एवं एक सहस्र स्वर्ण मुद्राओं द्वारा पुरस्कृत किया जायेगा।'

इसके पश्चात् सभा बिसर्जित हो गई और सभ्यगण अपने अपने बिभागीय कार्यों में संलग्न हो गये।

महाराज अरिन्दम की मानसिक शान्ति जैसे अपहृत हो गई। किसी ओर उनका चित्त न रम सका। बाटिका, शिव-मन्दिर, अश्वालय और विज्ञानशाला सब अनाकर्षक से प्रतीत होने लगे। अन्त में क्लान्त भाव से अपने शयनागार में जाकर लेट रहे। कालकेतु द्वारा संत्रस्त जनता का चीत्कार उनके कानों में गूंज रहा था। जान पड़ता था—सहस्रों नरनारी आर्त-स्वर में रक्षार्थ पुकार रहे हैं। नर्मद सेना की निष्क्रियता पर उन्हें बड़ी ग्लानि हुई। अंतस की दारुण वेदना से वे

विचलित हो उठे। वह शयनागार न होकर जैसे कारागार था। आकुलतापूर्वक इधर-उधर टहलने लगे। तभी कक्ष का द्वार खुला। महाराज चौंक उठे, मानों नर्मद के शरणार्थी प्रविष्ट हो रहे हों। किन्तु प्रत्यक्ष ने जन्हें सजग कर दिया। सामने एक स्मित बदना किशोरी खड़ी थी। महाराज क्षण भर को आत्मविभोर हो गये। यह उनकी तेरह वर्षीया पुत्री 'नागमणि' थी। मनोंभावों को अधिकृत करते हुए बोले– 'अरे मेरी मणि। तुम इस समय यहाँ कहाँ घूम रही हो? क्या आज आचार्य जी नही आये?" –कहते हुए उन्होंने उसे अंक में भर लिया।

नागमणि महाराज की गोद में सिमट कर बैठ गई और मुक्त भाव से बोली----"पिता जी, आचार्य जी ने आज मुझे छुट्टी दे दी है। वे पुरोहित जी के साथ सेनापति जी के पास गये हुए है। कह रहे थे कि नर्मद प्रदेश में किसी दस्यु पर आक्रमण की योजना बनानी है।"

स्वप्न भङ्ग हो गया। राजकुमारी के साथ वार्तालाप में जिस चिन्ता को महाराज विस्मृत कर चुके थे, इस प्रसंग ने उसे पुनः सजीव कर दिया। दस्यु पर आक्रमण की योजना उनके समक्ष भी समस्याकार आ उपस्थित हुई। मनोभावों का प्रभाव मुखाकृति पर स्पष्ट हो जाता है। उन्हें सहसा गम्भीर और चिन्तामग्न देख कर कुमारी ने कहा—"पिता जी! आप ऐसे चुप क्यों हो गये? बोलिये। क्या मैंने कोई

त्रुटि की हैं ?' बाल सुलभ चपलता के साथ ही उसकी निरीह दृष्टि में क्षमा प्रार्थना सी चमक उठी।

महाराज विचलित हो उठे। प्राणप्रिय बालिका का बालहठ एक ओर और शतशः नरनारियों की विपन्नावस्था दूसरी ओर। मनोवेदना से वे एक बार सिहर उठे फिर कुमारी के सिर पर सस्नेह अपना हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा—'बेटी उसी नर्मद के दस्यु का समाचार सुन कर कुछ चिंतित हो उठा हूं। सुना है कि वहाँ की सेना उसे बन्दी बनाने में असफल हो रही है उसके अत्याचारों का विरवण भी प्रकाश में आया है। यही सोच रहा हूं कि किसे उस दुष्ट का दमन करने के हेतु भेजूँ।'

"मुझे भेज दीजिये।" आतुरतापूर्वक कुमारी ने कहा—"मैंने आचार्य जी से भली भाँति युद्ध विद्या सीख ली है। शस्त्रों का प्रयोग भी मैं सुगमतापूर्वक कर लेती हूँ। उन्होंने मुझे दुर्गा होने का आशीष दिया है।" कहते हुए उसके निर्दोश आनन पर एक दिव्य तेज सा व्याप्त हो गया। नेत्र असाधारण भाव से ज्योतिर्मय हो उठे। आत्मविश्वास और अदम्य साहस की मूर्ति राजकुमारी महाराज की दृष्टि में सचमुच ही दुर्गा सी प्रतीत होने लगी। क्षणेक को वे उस तेजोराशि के समक्ष अभिभूत से हो उठे। फिर पितृ हृदय सजग हुआ। उन्होंने गोद में उठाते हुए कहा—'पुत्री, मेरे और इस विशाल मालव सेना के रहते तुम्हें युद्ध क्षेत्र में जाने की क्या आवश्यकता है ? और यह तो मुझे विश्वास ही है कि अवसर

पड़ने पर तुम मेरा और अपने आचार्य जी का मस्तक उन्नत कर दोगी।' फिर उन्होंने गोद से राजकुमारी को उतारते हुए कहा—"जाओ अपनी मां के पास निश्चिन्त भाव से खेलो। मैं उस नीच दस्यु की व्यवस्था शीघ्र ही करूंगा। वह कालकेतु है, मैं उसका काल बनूंगा। मालव सेना में अभी पर्याप्त बल है।'

राजकुमारी ने जाते जाते कहा– 'एक बार मैं भी देखूंगी कि उस दस्यु में कितनी शक्ति है।' और समीपस्थ द्वार में अन्तर्हित हो गयी। महाराज अरिन्दम पुनः कालकेतु के दमन की योजना में मग्न हो गये।

२

"·····सावर्णिर्भविता मनुः ऊँ क्लीं। ऊँ शान्ति।" सप्तशती का पाठ समाप्त कर मालव नरेश ने पुनः ऊँकार का उच्चारण किया और भगवती दुर्गा के प्रति ध्यान मग्न हो गये।

यह राजप्रसाद के अन्तर्भाग में स्थित देव मन्दिर था जहाँ नरेश स्वयं पूजा करते थे। देव प्रतिमायें बहुमूल्य पाटम्बर परिधान एवं हेमाभरणों से अलंकृत थीं। राज-वाटिका के सुन्दर सुगन्धित पुष्पों की मालायें उनपर अर्पित थी। अगरु की सुवास वातावरण में व्याप्त थी। भवन के कोलाहल कलरव से परे, एकान्त स्थित यह देव-कक्ष शान्ति एवं पवित्रता का केन्द्र सा प्रतीत होता था। देव प्रतिमायें अभयमुद्रा में निर्निमेष देख रही थी, जैसे उनके नेत्रों से शान्ति वर्षा हो रही हो। घृत-दीप जल रहे थे और उनका दिव्य आलोक जड़-जेतन सभी का अन्धकार निवारण करने में सक्रिय था।

ध्यान समाप्त हुआ। नरेश ने नेत्र खोले। आचमन किया। समस्त पूजा-अर्चना का फल कृष्णार्पण कर अपने अपराधों के प्रति क्षमा याचना करते हुये प्रतिमाओं के समक्ष नत हुये, फिर 'यानि कानि च पापानि·····' के द्वारा प्रदक्षिणा की और प्रसाद का तुलसीदल ग्रहण कर मन्दिर के बाहर आये। इस समय वे पीताम्बर और उत्तरीय धारण किये हुये थे। मस्तक पर केशर का तिलक था और चरणों में पादुकायें। वस्त्रागार की ओर उन्मुख हुये, तभी सेवक ने आकर नत-मस्तम निवेदन किया----'देव, राज-ज्योतिषी जी प्रतीक्षा कर रहे हैं। आज उज्जयिनी की ओर यात्रा करने से पूर्व आपके दर्शन करने की इच्छा से पधारे हैं।'

'कौन ? सुशर्मा जी ! अच्छा जाओ। शीघ्र ही उन्हें आदर पूर्वक ले आओ। मैं पर्णकुटी में चल रहा हूँ।'

दूत अभिवादन करके चला गया और महाराज पर्णकुटी की ओर अग्रसर हुये। मन्दिर के उत्तर की ओर एक लघु उद्यान के मध्य छोटी सी तृणाच्छादित कुटी बनी हुई थी जिस पर निरन्तर सघन वृक्षों की शीतल छाया रहती थी। पूजा के पश्चात् जब कभी महाराज को एकान्त की आवश्यकता होती, यहाँ चले आते थे। राज-भवन में जो शान्ति-सन्तोष और तुष्टि उन्हें अलभ्य होती वह इस पर्णकुटी में सहज सुलभ रहती। अध्यात्मवादी महाराज अरिन्दम इस स्थल पर आकर संसार की भौतिक पीड़ा से मुक्त हो जाते थे।

इस समय उनका मन पूर्णतया निर्विकार था। थोड़ी ही देर बाद ज्योतिषी जी ने सेवक के साथ पदार्पण किया। अभिवादन के पश्चात् नरेश ने उन्हें यथोचित आसन दिया और बैठकर वार्तालाप करने लगे। उज्जयिनी-प्रवास का कारण पूछने पर सुशर्मा जी ने बताया—'सम्राट विक्रमादित्य के सामुद्रिक शास्त्री महर्षि त्रिलोचन मेरे पूर्वजों के आचार्य थे। यद्यपि कई पीढ़ियाँ व्यतीत हो चुकी हैं और त्रिलोचन स्वामी के वंश में अब कोई नही है, किन्तु वंश परम्परानुसार उनकी पुण्य तिथि पर श्रद्धांजलि अर्पित करने हेतु मुझे प्रति वर्ष उज्जयिनी जाना पड़ता है। जहां उनकी कुटी थी, आज भी एक चबूतरा स्थित है।'

'त्रिलोचन स्वामी का नाम मैंने सुना है। यद्यपि वे शैव थे और सम्राट विक्रमादित्य वैष्णव, तथापि स्वामी जी उनकी श्रद्धा के भाजन थे।'

'महाराज, यह धार्मिक संकीर्णता और विचारों की क्षुद्रता हम सामान्य जनों मे ही पायी जाती है। जो महान् हैं,उनकी दृष्टि में संसार का प्रत्येक सम्प्रदाय समान है। उनके मत से धर्म की व्याख्या एक है। सम्राट विक्रम जैसी प्रतिभा, गुण-गरिमा और उदारता तो अब अलभ्य ही हो गयी। उनकी सभा में जैसी दिव्य विभूतियाँ रहती थी, युग-युग तक उनका गौरवगान होता रहेगा। इतिहास के पृष्ठों में वैक्रमीय शासन को स्वर्ण-युग की संज्ञा दी गयी है।'

नरेश ने सहमति प्रकट करते हुये कहा—'आपका कथन

यथार्थ है। मानव का चारित्रिक उत्थान ही समस्त सुखों का स्रोत है। आज उसका अभाव सा हो रहा है। ईर्ष्या ने विकृत होकर दस्यु वृत्ति का विकराल रूप धारण कर लिया है। मेरे ही राज्य के नर्मद प्रदेश से अभी सूचना प्राप्त हुई है कि किसी कालकेतु नामक आततायी ने प्रजा को बहुत पीड़ित कर रखा है।' फिर कुछ रुक कर बोले—'बड़े सुअवसर पर आपका आगमन हुआ। मेरी जिज्ञासा है कि उसके दमन का कौन सा उपाय सफल होगा ?'

'कालकेतु !' ज्योतिषी जी ने स्वतः कहा—'मैंने यह नाम सुना है। जहाँ तक स्मरण होता है यह किसी राज्य का निर्वासित सेनानायक है। नाम परिवर्तन के साथ ही उसने दस्यु वृत्ति ग्रहण कर ली है। सैनिक जीवन का अनुभव ही उसकी सफलता का प्रमुख सहायक है। तथापि आप चिन्ता न करें। उपद्रवी का अन्त शीघ्र होता है।' नेत्र बन्द कर वे अंगुलिपर्वों पर गणना करने लगे। थोड़ी देर बाद ऊँकार के साथ जम्हाई ली और बताया—'कालकेतु की पराजय आपकी सेनाओं द्वारा निश्चित है, किन्तु इसमें कुछ विलम्ब है। यह आपका पूर्व जन्म का शत्रु है और कुमार यशोधन तथा कुमारी नागमणि को इससे हानि की सम्भावना है। युद्ध के समय इसके साथ पूर्ण सतर्कता एवं कौशल वाँछनीय है।'

महाराज की मुखमुद्रा मलिन हो गयी। एक अज्ञात सी आशंका उभर आई। सुशर्मा जी की भविष्यवाणी अकाट्य होती थी। अपनी प्राणप्रिय सन्तानों के अनिष्ट-अमङ्गल की

कल्पना मात्र से वे सिहर उठे। मौन देखकर ज्योतिषी जी ने पुनः प्रसंग चलाया—'आप चिन्ता न करें। कालकेतु का वध आपके किसी आत्मीय द्वारा ही रणभूमि में होगा। प्रजा को इस आततायी के अत्याचारों से निश्चय ही मुक्ति मिल जायेगी। जहाँ तक कुमार और कुमारी का प्रश्न है, आपकी छत्रछाया में वह इन्हें छू भी न सकेगा। हाँ, यह आवश्यक होगा कि इन दोनों कुलदीपकों की सुरक्षार्थ,आप पर्याप्त सेवक साथ रहने का आदेश दे दें।'

महाराज को कुछ धैर्य मिला—'अवश्य ही मैं आपकी आज्ञानुसार व्यवस्था कर दूँगा। वैसे भी राजपुत्रों के लिए सुरक्षा अपेक्षित होती है।' फिर कुछ सोचते हुये उन्होंने जिज्ञासा की—'जातक संस्कारों के समय आपने कुमारी के चौदहवें वर्ष कुछ विशेष गणना करने की बात कही थी। अब उसका तेहरवाँ वर्ष व्यतीत हो रहा है। यदि संगत हो तो इस विषय पर कुछ प्रकाश डालें।'

ज्योतिषी जी ने नेत्र मूँदे। मस्तक पर रेखायें-खिचीं स्मृति पर बल देकर उन्होंने ऊँकार का उच्चारण किया और बोले—'महाराज कुमारी नागमणि वास्तव में 'नागमणि' ही है। यह जहाँ भी जायेगी, सुख समृद्धि और तेज का केन्द्र बन कर रहेगी। किन्तु, जिस प्रकार मणि के लोभी संसार में सर्वत्र हैं, कुमारी के प्रति भी अनेकों में प्रबल आकर्षण होगा। यदि आप अधीर न हों तो मैं निवेदन करूँगा कि कुमारी वास्तव में देवकन्या है। इसके बाल्यकाल की घटना आपको

स्मरण होगी, जब यह मन्दिर के पूर्वोद्यान पर लेटी हुई थी और एक भयंकर महानाग इस पर अपने फण का छत्र कर रहा था। वह उसका रक्षक था, जैसे मणि को प्राणवत् संजोकर रखता है। तभी मैंने कुमारी का नामकरण 'नागमणि' किया था। मानव योनि में यह देवकन्या अक्षयकीर्ति,अतुल पराक्रम और असीम तेज अर्जित करेगी।'एक दीर्घ निश्वास लेकर पुनः ज्योतिषी जी ने कहा—'किन्तु भूलोक में इसके निवास की अवधि अल्प ही है। पुनः यह दैवी विभूतियों में लीन हो जायेगी। जहाँ तक मेरा विचार है यह आजन्म कुमारी ही रहेगी। वैवाहिक बन्धन की व्यवस्था इसके अनुकूल न होगी। आप इसे देवप्रतिमा की भाँति पूजें, किन्तु मोहग्रस्त होकर नहीं। अन्यथा, इसका वियोग आपको कष्टप्रद होगा। जब तक राजकुमारी का अस्तित्व आपके राज्य में है, पराजय की छाया भी न उत्पन्न हो सकेगी।'

महाराज ने धैर्य पूर्वक राजकुमारी का जीवन-वृत्त सुना। फिर मानसिक उद्वेग को दबाकर उन्होंने कुमार यशोधन के प्रति जिज्ञासा की—'ज्योतिषी जी, आपके निर्देशानुसार ही मैं कुमारी के प्रति आचरण करूंगा। यदि कष्ट न हो तो कुमार यशोधन के भविष्य पर भी कुछ प्रकाश डालिये।'

ज्योतिषी जी ने पंचपात्र के जल से आचमन किया, तत्पश्चात् कुछ गणना करते हुये बोले—'कुमार यशोधन मालव नरेशों मे आदर्श होंगे। पुरजन, परिजन और प्रजाजन उन्हें प्राण तुल्य स्नेह करेंगे। सुख-समृद्धि और वैभव उन्हें सहज

सुलज होगा। राज्य विस्तार के पश्चात् उनके हाथों यज्ञ सम्पन्न होने के भी लक्षण हैं। इतिहास के पृष्ठों में उनका जीवन-वृत्त महत्वपूर्ण स्थलों पर अंकित होगा। किन्तु···एक व्याघात है·····।'

इस अनपेक्षित विराम से महाराज चञ्चल हो उठे। कुमार के प्रति किसी अनिष्ठ का सन्देह उन्हें विचलित करने लगा। आतुरता पूर्वक बोले—'आपने व्याघात पर प्रकाश नहीं डाला। उसे भी स्पष्ट कीजिए। दैवी विधान मे परिवर्तन कौन कर सकता है ? आप जो भी बतायेंगे, धैर्यपूर्वक ग्रहण करूँगा। कुमार को किस अनिष्ट की सम्भावना है ?'

गम्भीर भाव से सुशर्मा जी ने बताया—'कुमार को किशोरावस्था में ही किसी भीषण युद्ध में भाग लेना होगा जिसमें अत्यधिक क्षत विक्षत हो जाने की सम्भावना है। किन्तु विजय और प्राण रक्षा निश्चित है। यही से कुमार का जीवन संघर्ष और प्रताप की ओर अग्रसर होता है। आप चिन्ता न करें। लीलामय का विधान सर्वथा निर्दोष और मंगलमय है। उनकी व्यवस्था में हम सांसारिक पामर जन स्वार्थ वश त्रुटि का अन्वेषण करते हैं, किन्तु वास्तव में वह शाश्वत, शिव और सुन्दर है। आप निर्विकार भाव से अपनी दैनिक चर्या में लगें और मुझे आज्ञा दें दर्शनार्थ आया था। आज ही संध्या समय उज्जयिनी की ओर प्रस्थान का मुहूर्त है।

नरेश नत मस्तक हुये। करबद्ध प्रणाम करके उनकी

पग-धूलि मस्तक पर धारण की फिर अत्यन्त विनम्रता पूर्वक उन्हें राजभवन के भीतर ले गये। सश्रद्धाभाव से भोजन कराकर दक्षिणा दी और सादर विदा करते हुये निवेदन किया—'उज्जयिनी से यथासम्भव शीघ्र ही लौटने का प्रयास कीजियेगा, ताकि अधिक समय तक आपकी अनुपस्थिति मुझे पीड़ित न कर सके।' और राजमहिषी शशिप्रभा सहित उनके चरणों में नत हो गये।

ज्योतिषी सुशर्मा जी ने स्वति पाठ के साथ उन पर अभिमन्त्रित जल छिड़कते हुये आशीष दिया और पादुकाओं की ध्वनि से वातावरण को पूरित करते हुये चले गये।

३

अरावली का गहन बन। पर्वत मालाओं के अञ्चल में एक दुर्गम घाटी। वृक्ष समूहों के मध्य एक गुफाद्वार दृष्टिगोचर हो रहा था, जहां सूर्य की किरणें भी प्रवेश न कर पा रही थीं। अन्धकार अस्वाभाविक रूप से व्याप्त था जिसके कारण वातावरण रौद्र सा प्रतीत होता था! कहीं किसी प्रकार की ध्वनि नहीं। कोई शब्द नहीं। केवल वायुवेग से कभी-कभी वृक्ष संघर्षशील हो जाते और उनकी मरमर ध्वनि उस निर्जन बन–प्रान्तर में दूर तक प्रतिध्वनित हो उठती थी।

लतागुल्फों से आच्छादित वह गुफाद्वार वास्तवमें एक दुर्ग द्वार था जो कुख्यात दस्यु कालकेतु का निवास था। मृगया की खोज में एक दिन वह किसी व्याघ्र की पीछा करता हुआ यहां तक आया था और इस प्राकृतिक दुर्ग की सहसा उपलब्धि से समस्त अरावली का सम्राट बन बैठा। इस दुर्गम और दुर्भेद्य गुफा का अस्तित्व किसी को ज्ञात न था। कालकेतु

ने इसे पूर्ण निरापद और अनुकूल देख कर अपना स्थायी निकास बनाया। योजनों विस्तृत अरावली प्रदेश के मध्य स्थित इस दुर्गम स्थल की खोज सहज सम्भव न थी, अतः वह निश्चिन्तभाव से सदल यहां रह कर आक्रमण की योजनायें क्रियान्वित करता रहता था।

गुफा के भीतर पर्याप्त समतल भूमि थी तथा छोटी-छोटी अनेक कन्दरायें। दस्यु वर्ग उनमें इस प्रकार रहता था जेसे राजकीय सेनायें अपने शिविरों में रहती हैं। फलफूल और बनस्पति की प्रचुरता थी। एक प्राकृतिक स्रोत था जिसका शीतल सुस्वादु जल निरन्तर पतली धारा के रूप में दक्षिण की ओर प्रबाहित होता रहता। इस समय कालकेतु उसी स्रोत के समीप वैठा जल-प्रवाह की गति देख रहा था। मन उसका सर्वथा निर्विकार था। न कोई चिन्ता न मोह। तभी सेवक माधव ने आकर बिनय की—'स्वामी, भोजन सामग्री समाप्त प्राय हो रही है। कोई व्यवस्था होनी चाहिये।'

कालकेतु मुक्ति लोक से भौतिक जगत में आ गया। जीवन और जीविका का प्रश्न सामने खड़ा था। उसकी भौंहें तन गयीं। मस्तक पर असन्तोष सूचक बक्र रेखायें अंकित करते हुए, नेत्र स्थिर हो गये और उनके तन्तुओं में रक्त प्रवाह की गति तीव्र हो गयी। भोजन की दैनिक चिन्ता ने उसे क्षुब्ध कर दिया। इस क्षुद्र किन्तु सर्वोपरि समस्या का सदा के लिये समाधान खोजने को वह आतुर हो उठा। गंभीर घोष करते हुए बोला—'भैरव को बुला लाओ। कहना कि

चतुर्भुज को भी साथ लेता आये।' उसने खाद्य समस्या को चुटकी में मसल डालने की कल्पना करते हुए भूमि से एक दूर्बादल नोच लिया और विचारों को कार्यान्वित करता हुआ उसे जलधारा में फेंक दिया। दूर्वादल डूबा नहीं, तनिक आन्दोलित हुआ फिर लहरों के साथ बहने लगा। कालकेतु मुस्कराया—उसी तृण की भांति मैं अपनी आवश्यकताओं को पराजित करूंगा। तृण का अस्तित्व लहरों के मध्य अब भी सुरक्षित था। न डूबा न नष्ट हुआ, पूर्ववत् बहता रहा। जैसे कालकेतु पर व्यंग्य कर रहा हो– 'खाद्य समस्या का अस्तित्व अमिट है।'

भैरव आया। साक्षात् भैरव था। कृष्णवर्णीय स्थूल काया। मदिरा के उन्माद में अरुण वर्ण नेत्र। अनियन्त्रित वाणी। अन्धकार में सहसा उसके बलिष्ट एवं पृथुल शरीर को देख कर दैत्य की भ्रान्ति हो जाती थी। लगभग वैसे ही भयानक और बलिष्ट, जिनके नेत्र क्रूरता एवं अपराधी मनोवृत्ति की घोषणा कर रहे थे, चार व्यक्ति उसके साथ थे। अपने दल में ये चतुर्भुज के नाम से विख्यात थे। जहाँ रहते चारों एक साथ। इनके साथ छोटे बड़े अनेक दस्यु थे और सबों का एकमात्र नायक कालकेतू था। उसके इंगित मात्र पर सम्पूर्ण दल अपना बलिदान करने को प्रस्तुत रहता। भैरव ने आते ही सिर झुका कर अभ्यर्थना की—'मेरे लिये क्या आज्ञा है?'

'आज्ञा!' क्रुद्ध स्वर में कालकेतु ने कहा—'मेरे कहने

से तुम्हें आज्ञा का बोध होगा ? माधव ने मुझसे बताया है कि खाद्य पदार्थ समाप्त प्राय है और तुम इस विषय से अनभिज्ञ हो ? इस दल का संगठन वृथा है, यदि तुम लोग ऐसी छोटी-छोटी आवश्यकताओं पर भी विजय नहीं पा सकते ।'

'स्वामी, रुष्ट न हों । नर्मद प्रदेश विशेष धनी नहीं है । यहां की आय हमारे लिये अपर्याप्त है । विन्ध्य और अरावली भी पर्वतीय क्षेत्र हैं । यहाँ भी कुछ विशेष प्राप्ति नहीं हो रही । एक स्वयंसिद्धि है कि जैसी आय होगी, वैसा ही व्यय सम्भव होगा ।'

'चुप रहो ! मुझे अर्थशास्त्र समझाने की धृष्टता कर रहे हो ? तुम्हारी वणिक् बुद्धि का उपयोग मुझे न चाहिये । विन्ध्य और नर्मद प्रदेश यदि निर्धन हैं तो उत्तर भारत तो सम्पन्न है । गांधार से मिथिला तक सर्वत्र पर्याप्त धन है । मैं इच्छामात्र करने पर इन सब राज्यों को अपने बाहु बल से पराजित कर सकता हूँ । उत्तर भारत का शासक हो जाना मेरे लिये सहज सम्भव है । मैं कठिनाइयों से विचलित नहीं होता । कार्यसिद्धि के निमित्त मनुष्य के पास केवल एक शक्ति होनी चाहिए—आत्मबल ।' कहते-कहते उसने अपने बज्रवत् बक्षस्थल पर मुष्टि-प्रहार किया ।

भैरब निर्भीक था और निस्संकोच भी । बोला—'तो स्वप्न देख कर ही क्यों रहें ? आज्ञा दीजिये, हम लोग समस्त उत्तर भारत में आपकी कीर्त्ति पताका लहरा देंगे ।'

कालकेतु के नेत्रों में एक अलौकिक सी प्रभा उत्पन्न हो गयी। अट्हास करता हुआ बोला—'धन्य है ! धन्य है !! अब यही उत्तम है कि दस्यु वृत्ति को त्याग कर राजवृत्ति ग्रहण की जाये। इसके हेतु हमें हर सम्भव उपाय द्वारा समस्त उत्तर भारत के राज्यों को हस्तगत करना होगा।' कहते हुए उसने चतुर्भुज की ओर देखा—'सर्वप्रथम सिन्धु नरेश पर आक्रमण करो। उसके पश्चात् गाँधार, पंचनद होते हुए पूर्व की ओर प्रस्थान करो। इस प्रकार इन राज्यों को बाह्य सहायता न प्राप्त हो सकेगी। तब तक मैं समीपस्थ मालव नरेश का मुकुट उतारूंगा और यदि किसी प्रकार मालव कुमार हस्तगत हो गया तो विश्वास करो, नरेश अरिन्दम मेरी चरण सेवा करेंगे।' अपने काल्पनिक भविष्य की रूप रेखा पर वह मुस्करा उठा।

माधव ने विनय की—'यदि यह उपाय इतना प्रभावशाली है तो हम लोग सर्वप्रथम प्रत्येक राज्य के राजवंशीय कुमारों का ही अपहरण करें। उनकी खोज में जब अधिकाँश सेना व्यस्त हो जायगी, हमें आक्रमण करने में विशेष सुविधा रहेगी।'

भैरव ने प्रसन्नतापूर्वक करतल ध्वनि की। कालकेतु ने माधव के बुद्धि चातुर्य की सराहना करते हुए सबको आदेश दिया—'धनिकों और राजकुलों की युवती स्त्रियों तथा बालकों का अपरहण ही उचित है। इस प्रकार उन सबका मनोबल क्षीण करके आक्रमण आरम्भ किया जायेगा। तब तक किसी

प्रकार निर्वाह करो। विदेश से लौटते हुए किसी बणिक समूह को खोज लो। कुछ दिनों के लिये समस्या टल जायेगी कहते हुए उठा। एक अंगड़ाई ली। अस्थिपंजर कड़कड़ा उठा। जान पड़ा—कोई विशालकाय वृक्ष गिर रहा है। फिर वह अश्वालय की ओर चल पड़ा और सैनिकगण देर तक वहीं बैठे अपना अपना कार्यक्रम बनाते रहे।

४

सूर्यास्त समीप था। अग्रगामी दल ने आकाश में विराम-सूचक पताका प्रदर्शित की। समस्त यात्री रुक गये। एकत्र होने पर सूचना मिली—'आजकी यात्रा समाप्त हो चली, अब विश्राम करना चाहिए।' आरोही उतर पड़े। सेवकों ने व्यवस्था सम्भाली। वाहन एक ओर लगाए गए, पशु दूसरी ओर। यात्रियों के शिविर कुछ दूर पृथक् थे। और इन सबके चतुर्दिक सैनिकों ने वृत्ताकार अपने शिविर लगाये। उसके दो उद्देश्य थे—बाह्य आक्रमण से रक्षा तथा सह-यात्रियों पर अनुशासन कुछ भोजन-व्यवस्था में लगे कुछ चारा-पानी में। सैनिकों ने शस्त्रागार संभाला। ब्राह्मण संध्या-बन्दन में प्रवृत हुए और भृत्य वर्ग सेवा में तत्पर हुआ।

'गोबर्धन को बुला लाओ और तुम अपने स्थान पर विश्राम करो।' मालव नरेश अरिन्दम ने एक भृत्य से कहा

य ालस भाव से नेत्र बन्द कर विचारमग्न हो गए

रात्रि का प्रथम चरण समाप्त पर था। भोजनोपरान्त दिन भर का हारा थका यात्री दल निद्रा की ओर अग्रसर हो चला। केवल विशिष्ट जन जिन पर कुछ गम्भीर उत्तर-दायित्व था—अभी जाग रहे थे। यहां पर मालव प्रदेश की सीमा समाप्त होती थी और सिंधु-राज्य की भूमि में प्रवेश था। महाराज अरिन्द सिन्धु नरेश दिवाकरदेव के निमन्त्रण पर उनकी राजधानी जा रहे थे। सिन्धु-राजकुमारी सुषमा का स्वयंवर था। मालव नरेश उनके सम्बन्धी होने के नाते विशेषरूप से सपरिवार आमन्त्रित थे। किन्तु कुछ ऐसी स्थिति थी कि नरेश रनिवाश को साथ न ला सके। उनका एकमात्र पन्द्रह वर्षीय किशोर यशोधन ही साथ आया था। कुमार यशोधन अपने नाम के ही अनुरूप था—गौरवर्ण, उन्नतललाट, आजानुबाहु, नेत्रों में एक औलिकता पूर्ण तेज और सुधामयी वाणी। देखते ही विश्वास हो जाता था—कोई देवकुमार है। पुरजन परिजन सभी उसे प्राणवत् प्रेम करते थे। वह मालव राजवंश का ही नहीं, सम्पूर्ण मालव राज्य का दीपक था। प्रजाजन उसे देख कर तुष्टि की सांस लेते, बालवृन्द उसे अपने मध्य पाकर सगर्व हो उठता और नारियों के मुख से सदैव उसके प्रति सस्नेह मङ्गल कामनायें प्रकट होतीं।

महाराज अपने विशेष शिविर में शयन कर रहे थे। समीप ही कुमार की शैया थी, जिसके पायताने की ओर दो भील युवक कुमार के निजी परिचारक के रूप में बैठे थे। एक कोने में चन्दन की कलापूर्ण चौकी पर रजत पात्रों में जल

भरा रखा था। सिरहाने की ओर एक रस्सी के सहारे अनेकों अस्त्रशस्त्र लटक रहे थे। धूपदान में अगरु सुलग रहा था, जिसकी मनोरम गन्ध शिविर भर में व्याप्त थी। गोवर्धन आया। महाराज ने नेत्र खोले और सामयिक सतर्कता के प्रति आदेश देते हुए कहा—'सबेरे ही प्रस्थान करना है। सेनापति से कह देना कि रात्रि निर्विघ्न व्यतीत हो, ऐसी व्यवस्था रखें। दो सेवकों को मेरे शिविर के द्वार पर नियुक्त कर देना और तुम स्वय रात्रिभर घूम-घूम कर सारी व्यवस्था पर दृष्टि रखना।'

गोवर्धन आज्ञा शिरोधार्य करके चला गया। महाराज की वाणी में तन्द्रा एवं चिन्ता का स्वर था। कुमार यशोधन ने समीप आकर कहा—'पिता जी, आप निश्चिन्त भाव से सोयें इतनी सेना साथ है, फिर हम स्वयं भी तो समर्थ है। आप किसी प्रकार की आशंका न करें।'

महाराज ने कुमार की पीठ पर हाथ फेरा और तुष्टि भाव से बोले—'वत्स मैं चिन्तित नहीं हूं। किन्तु यह वन प्रदेश है। रक्षार्थ सभी ओर सोचना पड़ता है। अब तुम जाकर शयन करो।'

कुमार आश्वस्त भाव से लौट आये। भृत्य ने दीपक का प्रकाश मद्धिम कर दिया और सब लोग हरि-स्मरण कर निद्राञ्चल की ओर अग्रसर हुये जो विश्व का सर्वथा एकान्त एवं शान्तिदायी स्थल है

अर्धरात्रि की नीरवता। शिविर के समीपस्थ वृक्षों की छाया ने अत्यधिक अंधकार उत्पन्न कर रखा था। समस्त मालव यात्री सो रहे थे। केवल कुछ विशेष सैनिक रक्षार्थ जाग रहे थे। तभी एक बाण आया। उसके नासाग्र में अग्नि-शिखा प्रज्वलित थी यह संकट की सूचना थी। सैनिकों ने तूर्य ध्वनि की। भृत्यों ने तुरन्त प्रकाश उत्पन्न किया और क्षण भर में ही सारी सेना सजग होकर शस्त्रों से सज्जित हो गयी। किन्तु इस सतर्कता के पूर्व ही शिविर पर अविराम गति से बाण वर्षा आरम्भ हो चली। कितने ही सैनिक एवं सेवक आहत हो गये। इस आकस्मिक आक्रमण ने सहसा मालव सेना को विचलित कर दिया। तभी सेनापति ने गर्जना की—'कवच धारण करके बाण चलाओ।' और भीषण हुंकार के साथ युद्ध घोष किया—'हरहर महादेव।' सैनिकों को प्रोत्साहन मिला। जयध्वनि गूंज उठी—'महाराज अरिन्दम की जय !!'

आक्रमक समीप आ गये। तुमुल युद्ध प्रारम्भ हो गया। महाराज स्वयं शस्त्र सज्जित होकर रणक्षेत्र में उतर पड़े। अब बाण वर्षा स्थगित हो गयी थी और असि प्रहार तथा शूल परिचालन के द्वारा सब अपनी-अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर रहे थे। कुछ अश्वारूढ़ थे कुछ पैदल। अक्रामकों की संख्या अधिक थी। उनका दलपति, जान पड़ता था—अजेय है। मालव वीर उसका प्रतिरोध न कर सके। रोमांचकारी रक्तक्रीड़ा करता हुआ वह महाराज के समीप जा पहुँचा।

वे भी प्रलयंकर की भांति युद्धरत थे, तभी उसने पीछे से उन पर आघात किया। वह प्रहार महाराज के अंगरक्षक ने ले लिया किन्तु असह्य था। 'मालव राज की जय !!' कहते हुये धराशायी होकर उसने प्राण विसर्जन कर दिये। महाराज का क्रोध द्विगुणित हो उठा और वे आक्रमक पर व्याघ्र की भाँति टूट पड़े। वह भी सतर्क था। आत्म–रक्षा करता हुआ बोला – 'जानते हो ! मैं कालकेतु हूँ। मालव राज्य पर मेरा शासन होगा, तुम्हारा नहीं। नर्मद ले ही चुका हूँ, मालव भी लूँगा और तुम सपरिवार मेरे बन्दी होगे।'

'ले मालव प्रदेश !' सेनापति ने उस पर शूल का भयंकर प्रहार किया। किन्तु एक अन्य दस्यु के मध्यस्थ हो जाने के कारण कालकेतु सुरक्षित रह गया। उसके प्रमुख सहयोगी माधव और भैरव भी पास आ गये। चतुर्भुज अन्यत्र युद्ध कर रहे थे। मालव सेना अपर्याप्त थी। कालकेतु का नाम सुनते ही वह धैर्यहत हो गयी। उसकी इस दुर्बलता से लाभ उठाकर कालकेतु ने महाराज को घेर लिया। वे हाथी पर थे। माधव और भैरव ने उनके अंगरक्षकों पर भीषण प्रहार आरम्भ कर दिये तभी कालकेतु ने हाथी से महाराज का ध्वज और छत्र उतार लिया। दस्युदल ने जयघोष किया और मालव सेना अनाथ की भाँति भागने लगी। नरेश अरिन्दम को जीवन की यह प्रथम हार असह्य हो गयी। वे शीघ्रता पूर्वक कालकेतु के ऊपर कूद पड़े और अपनी बलिष्ठ भुजाओं में उसे समेट लिया। शारीरिक बल में महाराज की प्रतिष्ठा

देश भर में अक्षुण्य थी। उन्होंने उसे समेटे हुए ही शिविर की ओर लौटने का विचार किया। यद्यपि वे चाहते तो उसी क्षण पटक कर उसका प्राणान्त कर देते किन्तु बन्दी बनाने की प्रेरणा ने उन्हें उस कार्य की स्वीकृति न दी। तभी पीछे की ओर से उन पर एक साथ कई प्रहार हुए। बन्धन शिथिल हो गया, वे आहत होकर गिर पड़े और कालकेतु जयध्वज लेकर शिविर की ओर अग्रसर हुआ। उसका उद्देश्य था कुमार का अपहरण।

महाराज के गिरते ही मालव सेना त्राहि त्राहि करने लगी। यह भीषण चीत्कार सुनकर कुमार यशोधन ने अपने अङ्ग रक्षक भील युवकों से कहा–'मेरा घोड़ा लाओ। जान पड़ता है, पिता जी संकट में हैं। मैं स्वयं देखूंगा।' और उन्होंने आतुरतापूर्वक कवच एवं शस्त्रास्त्र धारण कर लिये।

रक्षकों ने विनय की–'कुमार, जब तक मालव सेना का एक भी सैनिक जीवित है, आपको युद्धस्थल में जाने की आवश्यकता नहीं। हम यहाँ आपकी रक्षार्थ नियुक्त किये गये हैं। हमारी प्रार्थना स्वीकार करके आप यहीं रहिये। बाहर जाने में संकट है।'

'मूर्ख ! कायर !! बकवास में समय नष्ट करते हो ! मेरी रक्षा का भार तुम पर है किन्तु पिता जी की रक्षा का भार मुझ पर है। मेरे रहते किसी ने यदि पिता जी को स्पर्श कर लिया तो मेरे जीवन को धिक्कार है।' कहते हुए कुमार वेगपूर्वक शिविर से निकल गये। बाहर एक ही दृष्टि में

उन्होंने युद्ध की स्थिति का अध्ययन कर लिया और देखा कि कुछ सैनिक वृद्ध महाराज को उठाये हुए शिविर की ओर ला रहे हैं तथा आततायी कालकेतु राजध्वजा धारण किये हुए घोषणा कर रहा है– 'मालव राज्य का स्वामी मैं हूँ। कहाँ है वह राजकुमार ? पिता पुत्र दोनों को बन्दी करूंगा।'

कुमार का बाहुबल उद्दाम हो उठा। समीप ही आश्व-शाला थी। शीघ्रतापूर्वक अपना घोड़ा निकाला और आरूढ़ होकर कालकेतु की ओर दौड़े। आगे जाकर उसका मार्ग अवरुद्ध करते हुए उन्होंने प्रलय ध्वनि की—'आ गया वह राजकुमार। ले बन्दी बना ! और भीषण वेग से शूल का प्रहार किया। विजयमद ने कालकेतु को शिथिल कर दिया था कूमार का शूल सीधे उसके कन्धे में जा धंसा। उस आकस्मिक प्रहार को दारुण वेदना ने उसे विचलित कर दिया तभी कुमार ने दूसरा प्रहार किया। कालकेतु युद्ध क्षेत्र से बाहर की ओर भागा और कुमार ने उसका पीछा किया। साथ में कुछ दस्यु भी दौड़ पड़े। युद्ध की गति करवट ले रही थी। मालव सेनापति भी रक्षार्थ दौड़े। कुमार ने घोड़े की रास मुंह से पकड़ रखी थी और दोनों हाथों से असि प्रहार कर रहे थे। उस अभिमन्यु ने दस्यु दल के सभी महा-रथियों को त्रस्त कर दिया। शिविर-सीमा के बाहर जाकर कालकेतु ने उन्हें ललकारा—'मूर्ख बालक, सिंह की माँद में आकर अब तू बच न सकेगा। ले ! उसने विद्युत गति से प्रहार किया। किन्तु कुमार ने अविचलित भाव से उसका प्रतिरोध करते हुए कहा—'नीच, तू रात्रि में दस्युवृत्ति द्वारा

आक्रमण करता है। मैं सिंह की माँद में उसके दाँत निकालने आया हूँ। ले, अपनी रक्षा कर।' कहते हुए उन्होंने दुर्धर्ष रूप धारण कर लिया। उनके दोनों हाथ अदृश्य हो गये। केवल वायुमण्डल को चीरती हुई उनकी असिध्वनि ही सुनाई पड़ रही थी।

माधव और भैरव क्षण भर भी कुमार का विरोध न कर सके। उन्हें धराशायी करके कुमार ने अपने घोड़े को संकेत देकर कालकेतु के समीप स्थित कर दिया। भीषण युद्ध था। एक कालकेतु था तो दूसरा उसका काल। कुमार का मुख-मण्डल अग्निमय हो उठा था। श्रम और क्रोध से उनकी देह यष्टि द्विगुणित हो उठी थी। उनकी दृष्टि में न मोह की किरण थी न भय। एकमात्र प्रतिहिंसा की ज्वाला धधक रही थी। एक हाथ से असि प्रहार द्वारा उन्होंने कालकेतु को व्यस्त कर दूसरे हाथ से पुनः उस पर शूल का प्रहार किया, जो सीधे उसके वक्ष में जा धंसा। एक 'आह' के साथ वह धराशायी हो गया और कुमार ने राज छत्र हस्तगत करके जयघोष किया—'मालव नरेश की जय!!' संकेत पाकर उनके अश्व ने कालकेतु के मुख पर सशक्त पाद-प्रहार किया और शत्रु सेना की ओर अग्रसर हो गया।

प्रमुख सेनापतियों के पतन ने दस्यु समूह को हतसाहस कर दिया। कालकेतु को उठा कर वे किसी प्रकार भाग निकले। मालव सेना में सर्वत्र उल्लास छा गया। कुमार और महाराज की जय से दिशायें गूंज उठीं। कुमार शिविर

में पहुंचे। पिता को व्रणपूर्ण अवस्था में देख कर उनके नेत्रो में जल भर आया। रोने लगा। विलाप करते हुए उन्होंने कहा—'मेरे जीवन को धिक्कार हैं। मैंने आज माँ का दूध कलंकित कर दिया। मेरे रहते आपको उस दुष्ट ने आहत कर दिया।' रोते-रोते वे महाराज से लिपट गये।

सेनापति ने उन्हें धैर्य दिया—'कुमार आप धन्य हैं। मालव रांजवंश की लाज आपने ही रखी। मां का दूध तो हम सबने कलंकित किया जो हमारे रहते उस दुष्ट ने राज छत्र हस्तगत कर लिया। धिक्कार हम सबको है। आपने आज राज्य का मुख उज्ज्वल कर दिया। अब चिन्ता न कीजिये। महाराज को सामान्य घाव ही लगे हैं। ईश्वर की कृपा से २-१ दिन में ही वे स्वस्थ हो जायेंगे।'

तभी महाराज ने नेत्र खोले। उनकी दृष्टि से अपार पितृ-स्नेह की धारायें उमड़ चलीं। पुत्रवान होना सार्थक हो गया। किन्तु अतिशय क्लान्तिवश कुछ कह न सके। केवल यही कहा—'मेरे यशोधन !'

चिकित्सक की औषधि में कुछ निद्राजनक प्रभाव था। अतः महाराज सोने लगे। शेष सेना जागती रही। एक प्रहर पश्चात् प्रातःकाल हुआ। विजय ने सबको पुनर्जीवन दे दिया था। यात्रा की समुचित व्यवस्था करके तथा सेना को विशेष सतर्कता का आदेश देकर सेनापति ने सदल सिन्धु राज्य की सीमा में प्रवेश किया।

५

सिंधु राज्य की राजधानी शर्करापुरी थी। जनश्रुति है कि एक बार सिंधु राज्य में भीषण अकाल पड़ा। जल संकट ने प्राणघातक रूप ले लिया। यह नरेश दिवाकर देव से कई पीढ़ी पूर्व की घटना है। तत्कालीन नरेश की प्रार्थना पर हिमालय के एक तपस्वी ने योगबल से एक ऐसा स्रोत उत्पन्न कर दिया जिसका जल शर्करा की भांति सुस्वादु एवं शीतल था। उस जल स्रोत से सात वर्ष तक निरन्तर इतनी प्रचुर मात्रा में जल निसृत होता रहा कि पूरे सिंधु राज्य का जल संकट दूर हो गया। बाद में नरेश ने निर्माण कार्यों द्वारा जल एवं सिंचन की ऐसी व्यवस्था कर ली कि राज्य का प्रत्येक भाग जल संकट की संभावना से रहित हो गया था। जहां वह स्रोत था, एक नगर बसाया गया। नामकरण हुआ शर्करापुरी। पुरातत्वविदों के मतानुसार आज का 'सक्खर' उसी का जीर्णविकृत रूप है।

शर्करापूरी का वातावरण आज अश्रुतपूर्व था। नगर के बाहर विशाल सभा-मंडप की रचना की गयी थी। दूर दूर के राजा एवं राजकुमार पधारे थे। मंडप की रचना जिस वैज्ञानिक आधार पर की गयी थी, वास्तुकला के इतिहास में वह एक गौरवपूर्ण कृति थी। पुरुषों एवं महिलाओं के बैठने की समुचित व्यवस्था थी सभी प्रयोजनीय पदार्थ सुलभ थे, जो संकेत मात्र पर ही सेवकों द्वारा इच्छुक जनों के पास प्रस्तुत हो जाते थे। मंडप के मध्य एक विस्तृत चबूतरा था, जिस पर अनेक प्रकार के शस्त्रास्त्र रखे थे। पास ही एक भीमकाय गजराज बंधा था। उसकी मत्त चेष्टायें सूचित करती थीं कि वह सर्वथा उच्छृंखल एवं निरंकुश है। मंडप में एक ओर राजकुल के सदस्य आसीन थे। समीप ही संभ्रान्त नागरिकों के परिवार थे। अतिथि उनसे कुछ पृथक् थे। दूसरी ओर सामान्य नागरिक बैठे हुये थे। चतुर्दिक् सैनिकगण घूम घूम कर सारी व्यवस्था का निरीक्षण कर रहे थे। आज सिंधु-नरेश महाराज दिवाकर देव की पुत्री राजकुमारी सुषमा का स्वयम्बर था।

ब्राह्मणों ने स्वस्ति पाठ किया। बंदी जनों ने विरुदावली वर्णन की और चारणों ने कीर्तिगान किया। तत्पश्चात् राज्य की ओर से घोषणा हुई—'इन समस्त शस्त्रास्त्रों का कुशलतापूर्वक प्रयोग एवं इस मदान्ध गजराज को बिना अंकुश वशीभूत करने वाले क्षत्रिय कुमार को सिन्धु राजकुमारी सुषमा का वर मनोनीत किया जायेगा। इच्छुक युवक अपने अपने कौशल का प्रदर्शन करने के हेतु रंगमंच पर पधारें'

वातावरण निस्तब्ध हो गया। दर्शकों की हृदय गति तीव्र हो गयी। सब आतुरता पूर्वक रंगभूमि की ओर देखने लगे। सर्व प्रथम कर्नाटक के राजकुमार ने प्रयास किया, किंतु वह सब अस्त्रों को उठा भी न सका। उसके पश्चात् मणिपुर पंचनद, विदर्भ एवं कौशाम्बी आदि के कुमारों ने चेष्टा की पर वे भी कृतकार्य न हो सके। दिन का चतुर्थ प्रहर आरम्भ हो गया। दर्शक चिंतित हो उठे। कुछ को सीता-स्वयम्बर का स्मरण हुआ। महाराज दिवाकर देव भी क्षुब्ध हो उठे। प्रायः समस्त भारत के राजकुमारों ने अपने अपने शौर्य का प्रदर्शन किया किन्तु सफलता उन्हें वरण न कर सकी। कोई शस्त्रास्त्रों में असफल हुआ कोई उस गजराज को वशीभूत करने में। धीरे धीरे संध्या वेला निकट आ गई। दर्शक उदास हो गये। उनकी कल्पना थी—आज किसी पुरुष पुंगव का पराक्रम दृष्टिगोचर होगा किन्तु निराशा ने उन्हें हतोत्साह कर दिया। जब सूर्यास्त में केवल आधी घड़ी का समय शेष रह गया, गोवर्धन ने महाराज अरिन्दम से निवेदन किया:—'देव, यह पराजय समस्त क्षत्रिय वंश की है। मेरा विश्वास है कि यदि आप कुमार यशोधन को आज्ञा दें तो वे अवश्य ही रंगभूमि के इस असंभव को संभव कर दिखायेंगे।'

महाराज अरिन्दम ने कहा—'प्रथम तो मैं कुमार को स्वयंवर में सम्मिलित करने की भावना से नहीं लाया, फिर युद्ध के कारण वे शिथिल भी हो गये होंगे। ऐसी दशा में उन पर यह भार रखना उचित नहीं है।'

गोवर्धन के साथ ही सेनापति ने उन्हें आश्वस्त किया—

'महाराज, कुमार ने मगध महिषी का दुग्ध पान किया है। आप निश्चिन्त भावसे उन्हें रंगभूमि में पदार्पण करने की आज्ञा दें। हम सबका विश्वास है कि वे मालव राज्य का मस्तक यहां भी उन्नत कर देंगे। यद्यपि वे अभी विवाह के इच्छुक नहीं हैं, किन्तु यहाँ पर प्रतिष्ठा का प्रश्न है। यदि वे स्वयम्बर में पधारे न होते, तब तो कोई बात ही न थी, पर आज की यह असफलता यहाँ के प्रत्येक दर्शक को खुली चुनौती है।

अन्त में महाराज ने आचार्य की स्वीकृति से कुमार यशोधन को रंगभूमि में जाने का आदेश दिया। कुमार ने ससंकोच एक बार दर्शक वृन्द की ओर देखा फिर नतमस्तक होकर आचार्य जी तथा पिता के चरणों में प्रणाम किया और निर्विकार भाव से रंगमंच की ओर अग्रसर हुये। सभा मंडप में एक बार पुनः आन्दोलन सा हुआ। चारणों ने घोषणा की—'मालव-नरेश महाराज अरिन्दम के कुलदीपक राजकुमार यशोधन अपने बाहुबल का प्रदर्शन करने, रंगमंच पर पधार रहे हैं। सफलता प्राप्त होते ही सिंधु कुमारी सुषमा की वरमाला के अधिकारी होंगे।'

दर्शक आतुरता पूर्वक कुमार की ओर देखने लगे। कुछ ने उनकी भावी सफलता या असफलता की भविष्यवाणी भी की। समस्त आयोजन के पीछे संभवतः यह अन्तिम प्रयास होने जारहा था।

राजकुमार ने रंगभूमि पर पदार्पण करते ही शीघ्रता-

पूर्वक उन सब गुर्ज, तोमर, भिन्दिपाल, परशु, असि तथा ऋष्टि का समुचित प्रयोग कर दिखाया। संग्रहीत धनुषों का उन्होंने विभिन्न प्रकार से प्रयोग किया और इस प्रकार शस्त्र परीक्षा में उत्तीर्ण होकर उस मदान्ध गजराज की ओर बढ़े। सवेरे से बँधा रहने के कारण वह बारम्बार चिंघाड़ रहा था। कुछ क्रुद्ध भी हो उठा था। कुमार को अपनी ओर आते देख कर झपटा। दर्शक भयभीत हो उठे। महाराज अरिन्दम को भी आशंका हुई—कहीं हाथी कुमार को आहत न कर दे। तभी जैसे ही उसने कुमार की ओर सूंड़ उठाई, उन्होंने उसके नासाछिद्र पकड़ लिये। क्रोधोन्मत्त होकर उसने कुमार को सूंड़ में आबद्ध करना चाहा, तभी उन्होंने दोनों हाथों से बल-पूर्वक उसके नासाछिद्रों का मर्दन किया। अत्यधिक पीड़ा ने हाथी को कुछ शिथिल कर दिया और कुमार शीघ्रतापूर्वक उसका कान पकड़कर मस्तक पर जा आसीन हुये। हाथी ने कई बार उन्हें सूंड़ से पकड़ने का प्रयास किया, किन्तु वे निरन्तर अपनी रक्षा करते रहे।

कुमार यशोधन विजयी हुये। 'धन्य ! धन्य !' की ध्वनि से सभा मंडप गूंज उठा। मालव नरेश का कीर्तिगान होने लगा और संध्या की पुनीत बेला में जब सर्वत्र दीपक जलाये जा रहे थे, सहस्रों कंठों की जयध्वनि एवं मंगलगान के मध्य राजकुमारी सुषमा ने मालव कुमार को जयमाला अर्पित की। सर्वत्र उत्साह और उल्लास व्याप्त होगया ! कुमार सुषमा सहित पिता और आचार्य के चरणों में नत होगये। महाराज

दिवाकर देव ने उन्हें गद्‌गद् भाव से आशीष देते हुये छाती से लगा लिया। दिन भर की क्लान्ति और निराशा क्षण भर में ही तिरोहित होगयी। शर्करापुरी में सर्वत्र आमोद-प्रमोद का साम्राज्य छा गया, जिसका वर्णन समारोह समाप्ति के पश्चात भी बहुत दिनों तक वहाँ के नागरिकों की चर्चा का विषय रहा। कुमार का तेज और हस्त लाघव उनके स्मृति पटल पर चिरकाल तक अंकित रहा। विस्मय-विमुग्ध भाव से लोग उनकी प्रशंसा करते रहे।

६

'.....प्रभो, शीघ्र ही इस दुष्ट का अन्त करो। इसके अनाचारों से तुम्हारे कितने ही सेवक पीड़ित हैं। धनी और निर्धन सब इससे संत्रस्त हैं। इस रावण का संहार हुये बिना देश में सुख-शांति असम्भव सी हो रही है।' महाराज अरिन्दम ने देव-प्रतिमा के समक्ष कर-बद्ध निवेदन किया और नेत्र बन्द कर ध्यानस्थ होगये।

राजप्रासाद का वही देवमन्दिर था और वैसा ही पावन वातावरण। अलंकृत प्रतिमायें अभयमुद्रा में खड़ी थीं। उनके पुष्पहारों और अगरु धूम्र की सुवास चतुर्दिक प्रसारित थी उस नीरवतापूर्ण शांति में एक अलौकिकता सी छायी हुई थी। कुछ समय पश्चात् नरेश ने ऊँकार के साथ ध्यान समाप्त किया और पादुकायें धारण कर वस्त्रागार की ओर चले। देवमंदिर के द्वार पर ही उन्हें राजकुमारी प्रतीक्षा करती हुई मिली। सस्नेह उसे अंक में भरते हुये बोले –"मणि ! क्या है ? इस प्रकार यहाँ क्यों खड़ी हो ?"

"पिता जी, मैं इधर से माता जी के लिये तुलसी दल लेकर जा रही थी, तभी आपकी प्रार्थना सुनी। वही जानने के निमित्त ठहर कर प्रतीक्षा करने लगी। किस दुष्ट के आतंक ने आपको व्यथित कर रखा है, मुझ से भी बताइये।'

राजकुमारी की निर्दोष दृष्टि और वाचालता पर मुग्ध होते हुये महाराज ने कहा---'पुत्री, यह सब शासन की समस्याएँ हैं। तुम्हें अभी इनसे मुक्त ही रहना चाहिये। जाकर खेलो। मेरे समक्ष जो भी कठिनाई होगी उसका निराकरण वे करेंगे।' कहते हुये उन्होंने शिव-प्रतिमा की ओर सादर इंगित किया।

राजकुमारी बालहठ के स्वर में बोली—'किंतु पिता जी, आप ही तो कहा करते थे, कि विपत्ति में पुरुषार्थ करना चाहिये। दैव भी उसी का सहायक होता है जो पुरुषार्थ द्वारा स्वयं अपनी सहायता करता है। यदि आपके समक्ष कोई कठिनाई है तो उसका उपाय स्वयं सोचिये।'

'सोचूँगा, बेटी ! अवश्य ही उस दुष्ट के प्रतिकार का उपाय करूंगा। उसी में सहायतार्थ भगवान से प्रार्थना कर रहा था।'

'तो मुझ से भी बताइये उस दुष्ट का नाम, जो आपकी शांति में बाधक हो रहा है।'

'मणि यह सब शासन और समाज की दैनिक समस्यायें हैं। इनमें व्यस्त होना तुम्हारे लिये अभी उचित नहीं है। दुष्ट कालकेतु ने सिंधु नरेश पर आक्रमण कर दिया है। कल

उनका द्रुत सहायता की याचना करने आया है। अभी महामन्त्री से परामर्श करूँगा, फिर जैसा सम्भव होगा, निदान किया जायेगा।' महाराज ने मणि की जिज्ञासा शांत की।

यदि आज्ञा हो तो परामर्श के समय मैं भी उपस्थित रहूँ। सीख लूंगी कि ऐसे अवसरों पर किस प्रकार विचार किया जाता है।' कुमारी ने साग्रह कहा।

नरेश उसके बालहठ और जिज्ञासा प्रवृत्ति पर मुग्ध हो उठे। स्मितभाव से मणि का सिर स्पर्श करते हुये कहा—'अवश्य रहना तुम। भविष्य में यही अनुभव तुम्हारे राजकार्य करने में सहायक होंगे। और बेटी सुनो—जब तुम राजरानी हो जाना तो मुझे भी अपनी सभा में कोई स्थान दे देना।' मुक्त हास्य के साथ महाराज ने वाक्य पूर्ण किया।

मुखाकृति पर लाज और संकोच की छाया सी आई किंतु राजकुमारी ने उसका परिहार करते हुये कहा—'आप अपने विषय में फिर कभी सोचियेगा। इस समय चलकर मन्त्री जी से परामर्श कीजिये। न जाने वह कालकेतु भाभी के माता पिता को किस रूप में त्रस्त कर रहा हो। सहायता भेजने में विलम्ब का अर्थ यह भी होगा कि मालवराज कायर हैं। कहते हुये राजकुमारी के नेत्र अस्वाभाविक रूप से तेजोमय हो उठे। तनिक विराम लेकर उसने पुनः कहा—'पिता जी, मेरी आत्मा कहती है कि उस नीच कालकेतु से कभी न कभी मेरा संघर्ष अवश्य होगा। बहुत दिनों से उसकी कुख्याति

सुनती आ रही हूं।'

महाराज ने मणि को शांत करते हुये कहा—'बेटी, धैर्य धारण करो। इतनी सेना के रहते तुम्हें उस पापात्मा के लिये चिंतित न होना पड़ेगा। जाओ, महारानी को तुलसी दल देकर मेरे परामर्श कक्ष में आ जाना। मन्त्री और आचार्य जी वहीं रहेंगे। मैं भी चलता हूँ।

राजकुमारी को अन्तःपुर की ओर भेजकर महाराज अरिन्दम परामर्श कक्ष की ओर चले।

* * *

राजपुरोहित सुशर्मा ने कहा—'महाराज दिवाकरदेव संकटग्रस्त हैं और अपना जानकर ही उन्होंने चर भेजा है, अतः शीघ्र ही उन्हें सैन्य-सहयोग देना अनिवार्य है।

महामन्त्री केदारदेव ने सुशर्मा जी का समर्थन करते हुये एक विकल्प प्रस्तुत किया—'आपत्ति में ही मनुष्य पराश्रय ग्रहण करता है। ऐसी स्थिति सम्भवतः हम पर भी आ सकती है। फिर सिंधुराज ने अपनी राजकुमारी के साथ हमारे राजकुमार का विवाह करके जो दृढ़तम संबंध स्थापित किया है उसके पोषण हेतु हमें अवश्य ही उनकी सहायता करनी पड़ेगी।'

महाराज अरिन्दम ने राज्य की सैनिक स्थिति पर प्रकाश डालते हुये समस्या के गंभीरतम रूप की ओर लक्ष्य किया—मालव सेना का एक बड़ा भाग नर्मद प्रदेश की रक्षार्थ गया

हुआ है। शेष पर राजधानी और सम्पूर्ण मालव राज्य की सीमा रक्षा का भार है। अतः यह विचारणीय है कि सिंधुराज को कितनी सेना और कहां से भेजी जाये।

दोनों वयोवृद्ध राजप्रमुख विचार मग्न हो गये। महाराज उनके उत्तर की प्रतीक्षा कर रहे थे। कुछ क्षण पूर्णतया नीरव, निस्तब्ध व्यतीत हुये, तभी कुमारी नागमणि ने कहा—'पिता जी, यदि आज्ञा हो तो मैं भी कुछ निवेदन करूँ।'

महाराज विचारमग्न थे। शिथिल नेत्रों से कुमारी की ओर देखकर कहा—'वत्स, तनिक महामन्त्री जी को सोचने का अवसर दो। पुरोहित जी की सम्मति भी कल्याणकर होगी। फिर तुम भी अपने विचार प्रकट करना।

महामन्त्री ने नरेश को आश्वस्त किया—'महाराज, आप राजकुमारी को अबोध न समझें। यह वह दैवी विभूति है जिसका दर्शन भी दुर्लभ हैं आप धन्य हैं जो इस देव कन्या के पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त किया। राजकुमारी को अपने विचार प्रकट करने का अवसर देना सर्वथा उचित होगा।'

राजपुरोहित सुशर्मा ने कुमारी के प्रति अपनी भविष्यवाणियों पर दृढ़ विश्वास व्यक्त करते हुये निवेदन किया—'महाराज, विशेष क्या कहूँ ? किंतु, इतना ध्रुव निश्चित है कि राजकुमारी को इस जीवन में कभी पराजय का स्वप्न दर्शन भी न हो सकेगा। मणि की भांति ही यह मालव

राजकुमारी सर्वत्र अपना तेज एवं प्रभाव सहज ही व्याप्त कर लेगी। ऐसी तेजोमय निर्मल दृष्टि, ऐसा कान्तियुक्त दिव्य आनन कही नही दीख रहा है। उसके करतल में जैसे रेखा-चिन्ह हैं, सामुद्रिक शास्त्र के मतानुसार वे अक्षयकीर्ति, अदम्य साहस और अतुलप्रताप के द्योतक है।'

अपने इन दो प्रमुख एवं वयोवृद्ध परामर्शदाताओं की सम्मति पर महाराज ने कुमारी को आज्ञा दी—'वत्स, बहुत दिनों से तुम्हारी प्रशंसा सुनता आ रहा हूँ। आज कालकेतु के प्रतिरोध और सिंधुराज की सहायता का कोई सुगम मार्ग खोज कर अपनी बुद्धिमत्ता का परिचय दो।'

कुमारी नागमणि ने सहज संयतभाव से कहा—'पिता जी, यह तो एक ऐसा सामान्य विषय है कि इस पर विशेष विवाद करना समय नष्ट करना ही होगा। मेरे विचार से आप नर्मद के सेनानायक को आदेश भेज दें कि वे अपने क्षेत्र की रक्षार्थ आधी सेना रखकर शेष सिंधुराज की सहायतार्थ भेज दें। साथ हो विशेष आवश्यकता पर प्रशिक्षित नागरिकों को किसी भी क्षण युद्ध के हेतु प्रस्तुत रहने की घोषणा कर दें। इधर आप भी मालव प्रदेश में ऐसी ही आज्ञा प्रसारित कर दें। जहां तक सिंधुराज को सेना भेजने का प्रश्न है, आप यहाँ की चतुर्थांश सेना भेजिये। किंतु प्रचार ऐसा हो कि मालव राज्य की सम्पूर्ण सेना सिंधुनरेश की सहायतार्थ गयी है। इस प्रकार कालकेतु अपने विरुद्ध महती सेना देख सुनकर सिंधु प्रदेश से संभवतः पलायन कर

जायेगा । और यदि उसने नर्मद अथवा मालव पर आक्रमण किया तो यहाँ की शेष सेना तथा प्रशिक्षित नागरिकों के दल उसका विरोध करने को पर्याप्त होंगे । यह भी उत्तम और सामयिक होगा कि प्रधान सेनाध्यक्ष संपूर्ण मालव राज्य की सैन्य व्यवस्था का सुगठन एवं गुप्तचरो के एक विशेष दल की नियुक्ति करें । मेरी धारणा है कि इस महान् आयोजन को विफल करने की क्षमता कालकेतु कभी भी अर्जित न कर सकेगा । वैसे आप गुरुजनों की इच्छा ही सर्वथा उचित और कल्याणकर होगी ।'

कुमारी की दूरदर्शिता पर पुरोहित सुशर्मा जी के नेत्र आनन्दाश्रु से पूरित हो उठे । इस प्रौढ़ एवं बुद्धिमत्तापूर्ण सम्मति की सराहना करते हुये उन्होंने महाराज को संबोधित किया—'देव, मैंने पूर्व ही निवेदन किया था कि कुमारी के शरीर में किसी दैवी आत्मा का वास है । कौन ऐसा रणविद्या विशेषज्ञ है जो इस समस्या पर इससे उत्तम समाधान प्रस्तुत करता । अब आप ऐसी ही व्यवस्था की आज्ञा दें । व्यर्थ का मनोरंजन उचित नहीं है ।'

महामन्त्री ने भी साधुवाद व्यक्त किया—'महाराज, ज्योतिषी जी का कथन सर्वथा संगत एवं समयानुकूल है । मेरा विश्वास है कि कुमारी द्वारा निर्धारित नीति मालव एवं सिंधु दोनों ही राज्यों को सुरक्षित रख सकेगी ।'

महाराज ने सस्नेह कुमारी को अंक में भर लिया और

उसकी केशराशि पर हाथ फेरने लगे। उनके नेत्र कह रहे थे—यह पुत्री नहीं है, मेरा सर्वगुण सम्पन्न पुत्र हैं, जिसके मस्तिष्क में किसी भी राजकीय समस्या को सुलझा लेने की अपार शक्ति है।

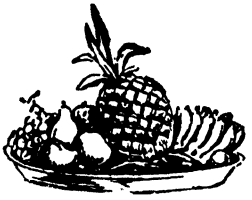

७

'पिता जी, जयानक पर मुझे सन्देह है। दुर्ग में विस्फोट उसी की दुरभिसन्धि का परिणाम है। उसे बन्दी बना कर इस कांड के कारण का भेद ज्ञात करने के लिए गोवर्धन को आज्ञा दीजिए।' राजकुमारी ने क्लान्त भाव से कहा।

महाराज अन्दरिम के मस्तक पर श्रमबिंदु झलक रहे थे। मुद्रा रोषपूर्ण थी। किंतु उस पर ऐसी विवशता व्याप्त थी जो सिंह के मुख पर उस समय होती है जब वह प्रहारकर्ता को देख न पा सकने के कारण प्रतिशोध लेने में असमर्थ हो जाता है। कुमारी का अनुमान सत्य था। सिंधु की सहायतार्थ मालव की विशालवाहिनी का आगमन सुनकर कालकेतु लौट आया और असहाय जानकर मालव राजधानी पर ही आक्रमण कर दिया। यद्यपि उसका स्वप्न साकार न हो सका और कुमारी के बुद्धि-चातुर्य ने उसे सीमा प्रवेश का

भी अवसर न दिया किंतु तीन दिन के घनघोर युद्ध के पश्चात्, अकस्मात् दुर्ग की प्राचीर का पश्चिमी भाग शत्रु सेना द्वारा ध्वस्त हो गया। उस ओर एक गुप्त भूमि मार्ग था, जिसका भेद शत्रु को ज्ञात हो जाना आश्चर्य एवं चिंता का विषय था। कुमार यशोधन सिंधुराज की सहायतार्थ गए हुए थे। प्रधान सेनापति नर्मद प्रदेश में थे। मालव की रक्षा का भार एकमात्र महाराज पर था, और अपने रण-कौशल से उन्होंने राजधानी में आतंक की छाया भी न आने दी थी परन्तु आज रात्रि की इस दुर्घटना ने उन्हें भी चिंता-ग्रस्त कर दिया।

राज्यापहरण और कीर्तिनाश से भी अधिक दुखद कल्पना थी, अन्तःपुर के मानमर्दन की। दुष्ट कालकेतु अपने आचरणों के प्रति कुख्यात था। महाराज तीन दिन से निरन्तर अश्वारूढ़ होकर सैन्य व्यवस्था में व्यस्त थे। प्राचीर का विध्वंसन आज सबकी चिंता का कारण हो रहा था। यद्यपि सेना के अन्य पदाधिकारी महाराज की सहायता कर रहे थे, किंतु उनसे कहीं अधिक प्रयत्नशील, जागरूक और व्यस्त राजकुमारी नागमणि थी।

'जयानक ? क्या वह विश्वासघात करेगा ?' महाराज ने जैसे स्वयं अपनी आत्मा से प्रश्न किया।

'लोभवश मनुष्य सब कुछ कर सकता है। कल प्रातः मैंने जयानक को प्राचीर के पार जाते देखा था। पूछने पर उसने कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं दिया था। वैसे उसे यह

ज्ञात था कि राजाज्ञानुसार इन दिनों प्राचीर लंघन सर्वथा निषिद्ध एवं राजद्रोह के तुल्य अपराध होगा।'

समीप से ही सुदर्शन चारण जा रहा था। उसका कार्य था अपने गीतों, व्याख्यानों एवं उपालम्भों द्वारा मालव सैनिकों का उत्साहवर्धन करना। अपने कार्य में निपुण था और महाराज का स्नेहभाजन। वह प्रशस्ति करता तो यथार्थ के आधार पर, किंतु ऐसे हृदयग्राही ढंग से कि विरोधी भी उसकी उक्तियों पर मुग्ध हो जाते। महाराज को देखकर नतमस्तक बोला—'देव, तीन दिन के असाधारण श्रम के पश्चात् आपके लिए कुछ विश्राम आवश्यक हो गया है। तब तक मैं नागरिक सुरक्षा का भार वहन करूंगा। आज्ञा दीजिये।'

महाराज ने समीप बुलाकर प्रस्तुत विषय से अवगत किया—'दुर्ग की प्राचीर का पश्चिमी भाग ध्वस्त हो गया है। शत्रु दल को नगर प्रवेश का अवसर न प्राप्त होने देना चाहिए। साथ ही जयानक के आचरण की परीक्षा लेनी है। इस दुर्घटना में उसका सहयोग परिलक्षित हो रहा है।'

चारण ने करबद्ध निवेदन किया—'जयानक के मनोभावों की सूचना सायंकाल तक अवश्य प्राप्त हो जायेगी। प्राचीर की रक्षा हेतु मैं निर्माण विभाग से एक दल लेकर अभी घटना पर जा रहा हूं। आप निश्चिन्त भाव से विश्राम कीजिये।'

महाराज नागमणि को लेकर अन्तःपुर चले गये।

सायंकाल राजभवन के विशेष प्रकोष्ठ में मालव नरेश चिन्तित मुद्रा में आसीन थे। समीप ही पुरोहित सुशर्मा, महामन्त्री, चारण सुदर्शन एवं राजकुमारी उपस्थित थे। एक ओर कोने में सैन्य विभाग का पत्रवाहक जयानक रज्जु-आबद्ध बैठा हुआ था। महाराज ने प्रश्न किया—'जयानक ! तुम पर मालव राज्य के प्रति विश्वासघात करने का आरोप है। सत्यभाषण करो कि किस लोभ से तुमने कर्तव्य विचलित होकर प्राचीर का भेद शत्रुदल को बताया ?'

जयानक नतमस्तक, मौन और अचल था, जैसे मूक और बधिर हो।

नरेश ने पुनः भ्रूविक्षेप किया। उनके नेत्र आग्नेय हो उठे। कानों में सहस्रों मालव निवासियों का रुदन गूंज रहा था। पराजय और सर्वनाश की कल्पना ने उन्हें कम्पित कर दिया। सक्रोध बोले—'प्रश्न के उत्तर में मौन का अर्थ होगा कि तुमने अपराध स्वीकार कर लिया है। सत्य भाषण का पुरस्कार होगा प्राणदण्ड और अपराध का दण्ड होगा अंगभंग। विलम्ब का दण्ड तुम्हारे समस्त परिवार को आजीवन कारावासी बनायेगा। बोलो, तुमने शत्रु को नगर-प्राचीर का भेद किस प्रेरणा से दिया ?'

जयानक ने सिर उठाया। उसके मुख पर कालिमा व्याप्त थी, जैसे पितृघाती हो। नेत्रों से प्रायश्चित स्वरूप जलबिंद निसत हो रहे थे। जान पड़ता था—वह क्रमशः

निस्तेज होता जा रहा है। पश्चात्ताप के स्वर में बोला—'स्वामी, मैंने पाप किया है। मालव राज्य के प्रति विश्वासघात करने के फलस्वरूप मैं मृत्युदण्ड का भागी हूं, वही दीजिए। और कुछ न कहूंगा।'

'यह महाराज के प्रश्न का उत्तर नहीं है।' महामन्त्री ने सरोष कहा।

'स्पष्ट करो कि ऐसी पापलिप्सा तुम्हारे अन्तःकरण में कैसे जागृत हुई?' सुशर्मा जी ने कहा।

'कल प्रातःकाल तुम प्राचीर के पार कहां जा रहे थे? 'अभी आया' कह कर तुमने शीघ्रतापूर्वक क्यों मेरा साथ छोड़ दिया था? शत्रु दल की ओर ले जाने का कौन सा पत्र, किसके द्वारा लिखा गया, तुम्हारे पास था!' कुमारी ने दृढ़ स्वर में पूछा।

महाराज ने निर्णय दिया—'सुदर्शन, इस नीच को बधभूमि ले जाओ। आज इसके दुष्कृत्य ने समस्त मालव निवासियों को आचूड़ रक्त स्नान के लिये विवश किया है। इसकी नग्न काया को तप्त लौह दण्डों से प्रताड़ित करके आकण्ठ भूगर्भस्थ कर दो। ऊपर से हिंस पशुओं द्वारा इसका मस्तक विदीर्ण करा दिया जाये। इस नराधम के संपूर्ण परिवार को कारावास दे दो। ले जाओ इसी क्षण। मैं जा रहा हूँ प्राचीर की व्यवस्था देखने।' और वे उठने को उद्यत हुये।

इस दण्ड व्यवस्था को सुनकर जयानक चीत्कार कर उठा। आर्तनाद करता हुआ करबद्ध बोला-'अन्नदाता, मेरा पाप अक्षम्य है। क्या कहूं, बुद्धि भ्रष्ट हो गयी थी, इसी से लोभ ने ग्रस्त कर लिया। किंतु अवसर पाऊं तो कालकेतु को पराजित करके अपने अपराध का आँशिक प्रायश्चित कर लूं। उसके पश्चात् मैं सहर्ष मृत्यु दण्ड स्वीकार कर लूँगा।'

'विश्वास का बीज एक बार नष्ट हो जाने पर पुनः अंकुरित नहीं हो सकता। मालव राज्य को तुम्हारी सेवाओं की आवश्यकता नहीं रह गयी है। हां, प्रायश्चित का अवसर अवश्य दे दिया जायेगा। किंतु यह ज्ञात हो जाने के पश्चात् ही कि किस लोभ ने तुम्हें इस जघन्य कृत्य की प्रेरणा दी।' वृद्ध महामन्त्री का निर्णय था।

'स्वामी, कालकेतु को किसी प्रकार ज्ञात हो चुका है कि राजकुमारी नागमणि में अलौकिक तेज एवं प्रभाव है। वे जहां भी रहेंगी विजय प्राप्त होती रहेगी। मालव राज्य के अर्धभाग का प्रलोभन ही मेरी इस कुचेष्टा का कारण था कि दुर्ग के शत्रु सेना को प्रवेश का अवसर दूँ ताकि वह राजकुमारी को प्राप्त कर सदा सर्वदा के लिये विजय-वरण करे।' जयानक ने दारुण स्वर में रोते हुये बताया।

रत्नकुमारी की मुद्रा क्रोधपूर्ण हो उठी। प्रतिहिंसा की उग्र भावना से उनकी देह थरथराने लगी, जैसे वायु के झकोरों

से लता कंपित हो उठती है। आंतरिक घृणा दुर्दम हो उठी—'हूँ, तो तेरी योजना थी मेरा अपहरण कराने की ! नीच, पापी, दुष्ट ! मैं तुझे, तेरे आश्रयदाता उस चांडाल कालकेतु और तेरे अन्य सहायकों को शपथ देती हूँ कि कल प्राचीर के द्वार पर मैं स्वयं युद्ध करने जाऊँगी। जिस किसी को अपनी माता पर अभिमान हो आकर मेरा स्पर्श करने का प्रयास करे।' उनके कमल जैसे निर्मल नेत्र अग्निकुण्ड हो उठे। वह ज्वालामयी दृष्टि देख कर जयानक सहसा सिहर उठा।

महाराज ने निर्णय दिया—'इस नीच को बंधनमुक्त कर दिया जाए। किंतु आठ व्यक्ति निरन्तर इसके साथ रहें। कल सायं तक के लिए उसे प्रायश्चित का अवसर दिया जाता है। इसके पश्चात् कारावास दे दिया जाये।

* * *

दूसरे दिन प्रातः से ही भयंकर युद्ध आरम्भ हो गया। मालव नागरिक प्राणों का मोह त्याग कर आत्मरक्षार्थ सन्नद्ध हो गये। ध्वस्त प्राचीर रात भर में पूर्ववत् निर्मित हो चुकी थी। महाराज अरिन्दम अश्वारूढ़ महाकाल की नाईं प्राचीर द्वार पर युद्धरत थे। शत्रुदल सिंह द्वार को नष्ट करने का अथक प्रयास कर रहा था, किंतु मालव सेना उसे कृतकार्य होने का अवसर न दे रही थी। बाण, शूल, परशु और गदा के प्रहारों से अगणित शूरवीर धराशायी हो रहे थे। यह लक्ष्य करने का अवसर न था कि कौन शत्रु है कौन मित्र।

अंधाधुंध शस्त्रवर्षा हो रही थी। रक्त-धारा अपना मार्ग खोज रही थी। युद्धक्षेत्र इतना जन-संकुल था कि भूमि पर रक्त के संयोग से गहरी कीचड़ उठ आई थी। क्षत-विक्षत शवों, नरमुण्डों और आहतों के आर्तनाद ने बड़ा ही रौद्र वातावरण उत्पन्न कर रखा था। एक दस्युदल किसी राजधानी को हस्तगत कर ले, पराजय की इस निंदनीय कल्पना से ही प्रत्येक मालव सैनिक विचलित हो उठता। चारण सुदर्शन का आह्वान गूंज रहा था—'जय ही स्वर्ग है और पराजय ही नर्क। मृत्यु में यश है और जीवन में घृणा। मातृभूमि के लिए बलिदान होने वाले पुरुष ही देवता होते हैं !!'

महाराज ने सिंहनाद किया—'मालव भूमि की जय !!'

सहस्र कण्ठों से ध्वनि निकली—'मालव नरेश की जय !!!' तभी दुर्धर्ष दस्यु कालकेतु मालव सेना को चीरता हुआ महाराज के समीप आकर गरजा—'आ गया मैं कालकेतु। कहाँ है कुमारी नागमणि ? ले चलो उसे मेरे महल में। कायर मालव नरेश को बन्दी करो।' उसने दस्युदल को प्रोत्साहित किया

जैसे उल्कापात हो गया। उस भीषणतम संघर्ष के मध्य भी प्रत्येक व्यक्ति कंपित हो उठा। सबने देखा—जैसे बादलों के मध्य चपला कौंधती है, सिंहद्वार से निकल कर अश्वारूढ़ राजकुमारी नागमणि युद्ध क्षेत्र में समा गयीं। उन्होंने घोड़े की रास मुंह से दबा रखी थी और विद्युत वेग से दोनों

हाथ असि प्रहार करती हुई कालकेतु के समीप जा उपस्थित हुईं । सहायतार्थ स्वयं महाराज तथा मालव सेना के अन्य कई वरिष्ठ अधिकारी उनकी ओर दौड़ पड़े । कुमारी ने दस्यु के निकट पहुंचते ही प्रलय-ध्वनि में कहा—'नीच ! ले, आ गयी मैं नागमणि । यदि आर्य जननी का पुत्र हो तो मेरे शरीर को स्पर्श करने का साहस कर ।' और अदम्य वेग से उन्होंने उस पर शूल का प्रहार किया ।

कालकेतु ने रक्षार्थ घोड़े को संकेत किया, फिर भी कुमारी का प्रहार उसके पैर को विदीर्ण कर गया । वेदना से क्रोधोन्मत्त होकर—'पापीयसी, युद्ध का फल भोग,' कहते हुये उसने भी राजकुमारी पर शूल का प्रहार किया । किंतु वह वीरबाला शतर्क थी । इंगित मात्र से उसका घोड़ा उछल गया और कालकेतु अपने वेग से स्वयं ही धरती पर आ गिरा । यह जय-पराजय का नहीं, जीवन और मृत्यु का प्रश्न था ।

कालकेतु शीघ्रतापूर्वक एक अन्य सैनिक के घोड़े पर चढ़कर पुनः कुमारी के सम्मुख आ गया । उसका राक्षस क्रुद्ध हो उठा था । आसुरी वेग से युद्ध करने लगा । तब तक महाराज कुमारी के समीप आ गये थे । उन्होंने चेष्टा की कि कुमारी को पीछे करके स्वयं कालकेतु पर प्रहार करें, किंतु इसका अवसर न मिल सका । एक अन्य दस्यु ने उनका मार्ग अवरुद्ध कर लिया और तब तक कालकेतु कुमारी के ठीक

सामने आकर तड़पा—'नागिनी, ले तेरा सिर कुचलता हूं।' और उसने शीघ्रता पूर्वक असि प्रहार किया।

'झन्न !' कुमारी ने बीच में ही अपने हस्त लाघव से शूल द्वारा उसकी तलवार खण्डित कर दी और वह अपराजय वेग से उठा हुआ उनका शूल शत्रु की असि को छिन्न-भिन्न करता हुआ उसके दाहिने कंधे में जा धंसा पराजय की संभावना और व्रण की दारुण वेदना ने उसे अतिशय शिथिल कर दिया। समर क्षेत्र का परित्याग कर वन प्रदेश की ओर पलायन करता हुआ चिल्लाया—'यदि जीवित रहा, तो मालव राजभवन को स्मशान कर दूंगा।'

और उत्तर में कुमारी का तड़ितनाद सुनाई पड़ा—'मैं उसी कुमार यशोधन की भगिनी हूं जिसने अश्व के पादप्रहार द्वारा तेरा मुखभंजन किया है।'

विजय-ध्वज लहराती हुयी मालव सेना नगर की ओर लौटी। सर्वत्र आनन्द की वर्षा हो रही थी। नगरवासियों ने विजेताओं का हार्दिक स्वागत किया। नारियों ने मङ्गल कलश सजाये और आरती उतारी। राजभवन से लेकर नगर के सामान्य घरों तक सर्वत्र दीपावली मनाई गयी। विजय के उपलक्ष्य में महाराज अरिन्दम ने समस्त मालव जनता के प्रति सस्नेह आभार प्रकट किया और यथायोग्य पुरस्कार वितरित किये।

बहुत दिनों तक, जब जब इस युद्ध और विजय की

चर्चा चली, लोग राजकुमारी की अलौकिक शक्ति, गुण संपन्नता, शौर्य और तेज की सराहना करते रहे। मालव राज्य का प्रत्येक नागरिक आश्वस्त हो चुका था कि जब तक राजकुमारी नागमणि हमारे मध्य उपस्थित है, विघ्न, बाधाओं से हम सर्वथा मुक्त रहेंगे।

८

अश्वारोही ने रास खींची और वह सुशिक्षित पशु तुरंत ही रुक गया। सूर्य की प्रखर किरणों से प्रभावित उसके आरक्त मुखमण्डल पर तृष्णा और क्लांति की गहन छाया व्याप्त थी। मस्तक के श्रमबिंदुओं में उसकी कमनीयता निखर उठी थी और शरीरस्थ शस्त्र उसके शौर्य की घोषणा कर रहे थे। अश्व उससे भी अधिक क्लांत था।अपनी लौह श्रृंखला को चबा चबा कर वह कदाचित् उससे रास निकालने की चेष्टा कर रहा था। ज्येष्ठ का मध्यान्ह और निर्जन बन। ताप की उष्णता और जल के अभाव से दोनों ही अतिशय शिथिल हो रहे थे।

"गरुड़ ! मैं यहीं हूँ, तुम जाकर कहीं जलाशय की खोज करो। मिले या न मिले, शीघ्र ही लौट आना।' आरोही ने कहा और वह स्वामिभक्त अश्व उसे सूंघकर एक ओर चल पड़ा।

किशोर अत्यधिक क्लाँत हो चुका था। वट-वृक्ष की छाया और वायु के स्पर्श ने उसे तन्द्रिल कर दिया। उत्तरीय बिछाकर भूमि पर लेट गया। विचारों ने दिन भर का श्रमान्वेषण आरम्भ किया, किंतु उसने इस मानसिक अशांति से मुक्ति पाने के लिए निद्रा का आश्रय ले लिया जो समस्त भौतिक जगत् के अस्तित्व को आत्मसात् कर लेने में समर्थ है।

एक अनपेक्षित सी पगध्वनि और झंझावात के वेग ने उसकी निद्रा भंग कर दी। सहसा उठकर देखा—समीप ही से मृग भागा जा रहा है और एक अश्वारूढ़ व्यक्ति अनुचरों सहित उसे पकड़ने में प्रयत्नशील है। एक अज्ञात आशंका ने किशोर को कंपित सा कर दिया फिर भी वह ससाहस उठकर खड़ा हो गया। आगन्तुक ने उसे देखा और पूछा—'इस निर्जन बन में अकेले भ्रमण करने वाले तुम कौन हो? उसका स्वर अत्यन्त कर्कश था।

'कोशल के मन्त्री का पुत्र हूँ। मेरे साथी जलाशय की खोज में हैं और मैं यहाँ आखेट के पश्चात् विश्राम कर रहा हूं।'

'हा-हा-हा-हा! मन्त्री के पुत्र! चलो, यह भी शुभ रहा। मृग गया तो यह सिंह शावक मिला। माधव! ले चलो इसे। अब इसके द्वारा पर्याप्त धनराशि मिल सकेगी। हा-हा-हा-हा!' एक विकट अट्टहास गूंज उठा।

किशोर ने अपने अस्त्र भूमि पर रख दिए थे। जैसे ही

उठाने का प्रयास किया, आगन्तुकों ने शीघ्रतापूर्वक घेर कर उसे बन्दी बना लिया और बलात् उठाकर ले चले। तभी मुक्ति की चेष्टा में उसका उष्णीष गिर पड़ा और कंधों पर आलुलायित केशराशि लहराने लगी।

'अरे, यह तो स्त्री है!' चकित भाव से माधव ने कहा।

सब उसकी ओर देखने लगे। दलपति का कर्कश स्वर पुनः गुंजित हुआ—'मायाविनी, सत्य कह। तू कौन है? पुरुष वेष में यहाँ आने का तेरा क्या प्रयोजन था?'

मायाविनी के पूर्व ही एक अनुचर बोल उठा—'स्वामी, मैं पहचान गया। यह मालव-नरेश की पुत्री है और निश्चय ही यहाँ मृगया के लिये आई है। मैं इससे भलीभांति परिचित हूँ।'

जैसे वक्ष में बाण चुभ गया हो। एक प्रच्छन्न सी वेदना हुई। किंतु मनोभावों पर नियन्त्रण करते हुये दलपति ने कहा—'अरे, यही है राजकुमारी नागमणि? निस्सन्देह मैं भाग्यशाली हूं। लाओ इसे इधर।' और क्षणेक में ही किशोर की कमनीय काया बलात् उसके अश्व पर लाद दी गयी। चलते चलते पुनः वही कर्णकटु स्वर वायु में गुंजित हुआ—'सुन्दरी, जानती हो न, मैं कालकेतु हूं। वही जिसे तुमने शूल से आहत किया था। वह घाव तो भर गया किंतु तुम्हारे नयन-बाण अब भी मेरे हृदय में धंसे हुये हैं। यह देखो…।' कहते हुये उसने अपना विशाल वक्षस्थल राजकुमारी के सम्मुख

कर दिया। फिर बोला—'और यह जिसने तुम्हारा परिचय दिया है, जानती हो कौन है ? यह केशव है, जयानक का सेवक। जयानक कायर था। मेरे साथ विश्वासघात करके तुम्हारे पिता से मिल गया। भयवश उसने अपराध स्वीकार कर लिया और युद्ध में मेरे हाथों मारा गया। यह केशव, वीर है, सत्यवादी। मालव नरेश की चिंता न करके मेरे साथ है। अब चलो। आज से तुम मेरे उपभोग की वस्तु होगी और मैं तुम्हारा दास। हा-हा-हा-हा !' मदिरा की तीव्र दुर्गन्ध के साथ ही कालकेतु का पैशाचिक स्वर वायुमंडल में व्याप्त हो गया।

असहाय और परवश राजकुमारी नागमणि के मस्तिष्क में विद्युतगति से अतीत की स्मृतियां जाग उठीं—'कालकेतु, राज्य का दुर्दान्त दस्यु। जिसके विरुद्ध अभी तक कोई अभियान पूर्ण सफल नहीं हो सका। और यह केशव, पापाचारी, मद्यप, नीच ! जयानक को पथभ्रष्ट करने में प्रमुख कारण। मालव राज्य के अन्न जल से पोषित होकर उसी का आक्रामक। छिः। फिर वर्तमान प्रत्यक्ष हुआ—'इस दस्यु से कैसे मुक्ति मिले ? पिता जी कितने ही पुरस्कार घोषित किये, किंतु आज तक कोई भी इस आततायी को बन्दी न बना सका। न जाने क्यों भगवान ने इसे भैया यशोधन और मेरे शूल से आहत करके भी जीवित रखा। न जाने अब इसके साथ किस नरक की यातना सहन करनी होगी।'

सहसा उन्होंने रक्षार्थ पुकारना आरम्भ किया—'गरुड़ !

गरुड़ !! तुम कहां हो ? दौड़ो, इस नीच से मेरी रक्षा करो। देखो, यह तुम्हारी मणि का अपहरण करके ले जा रहा है। दौड़ो। अरे कोई है ? गरुड़ ! गरुड़ !!' आर्तनाद से समस्त वन-प्रान्तर प्रतिध्वनित हो उठा। दस्यु दल की पलायन गति तीव्रतर हो गयी। कालकेतु ने कुमारी के मुंह में उत्तरीय का छोर भर उन्हें अवाक् कर दिया और अनुचरों को सतर्क रहने का आदेश देकर बन के गहनतम भाग में प्रविष्ट हो गया। तभी पार्श्व से एक शुभ्रवर्णीय अश्व निकला। साज-सज्जा युक्त किंतु आरोही विहीन। वह अपना पृष्ठ परिधान मुंह में दबाये हुये था जिससे जलबिंदु निसृत हो रहे थे। उसकी स्वस्थ एवं बलिष्ठ काया और बुद्धिचातुर्य को देखकर कालकेतु का लोभ जागृत हो उठा। अनुचरों से कहा—'देखो कितना सुन्दर और चतुर है यह ! किस बुद्धिमानी से अपने स्वामी के लिए जल ले जा रहा है ? पकड़ लो इसे।'

केशव आगे बढ़ा। राजकुमारी ने देखा—सामने से गरुड़ उसके लिये जल लेकर जा रहा है। किसी प्रकार मुखस्थ वस्त्र को दूर किया और पुकारा—'गरुड़, दौड़ो। मेरी रक्षा करो। ये दुष्ट मेरा अपहरण कर रहे है। दौड़ो !'

स्वामिनी का आर्तनाद सुनते ही गरुड़ चौंका। स्थिर होकर देखा—'एक अश्वारोही उसकी राजकुमारी को बलात् लिये जा रहा है। साथ में पांच व्यक्ति पैदल हैं। सम्भवत. अनुचर होंगे।' फिर घूमकर देखा—'उन्हीं में से एक उसकी ओर अग्रसर हो रहा है।' यह केशव था। जैसे ही उसने

समीप आकर रास पकड़ने की चेष्टा की, गरुड़ हिंस्र होउठा। केशव की दाहिनी भुजा उसने काट ली। असह्य वेदना से वह चीत्कार कर उठा। अन्य दस्यु भी प्रोत्साहित हो उठे। सब के सब गरुड़ को पकड़ने के लिए सन्नद्ध हुये किंतु उस स्वामिभक्त के पद-प्रहार और वेग में उन्हें क्षण भर में ही आहत कर धराशायी कर दिया। अनुचरों की दुर्दशा देखकर कालकेतु का दस्यु क्रुद्ध हो उठा। उसने फेंककर गरुड़ पर शूल का प्रहार किया। किंतु, व्यर्थ। गरुड़ उछला और शूल बाहर जा गिरा। पुनः पिछले पैरों पर दौत्याकार खड़े होकर उसने भीषण वेग से कालकेतु के अश्व पर आक्रमण किया। किंतु तभी उसके असिप्रहार से उसका कंठ भाग क्षत होगया। पुनः प्रचण्ड वेग से उसने कालकेतु को आक्रान्त किया। तभी न जाने कैसे, कहां से, एक वाण आकर दस्युराज के वक्ष में धंस गया। उसके मुंह से एक चीत्कार निकला और गरुड़ ने उसे खींचकर धराशायी कर दिया। बन्धन शिथिल होते ही राजकुमारी भी धरती पर आ गिरी और शीघ्रतापूर्वक कालकेतु का शूल लेकर गरुड़ पर आरूढ हो गयी।

अब वह निश्चिन्त, निर्द्वन्द्व थी। चलने का उपक्रम किया, तभी एक अश्वारूढ़ युवक सामने से आता दृष्टिगोचर हुआ। ठहर गयी। समीप आकर उसने पूछा—'भद्रे ! तुम कौन हो ? यह नीच तुम्हारा अपहरण क्यों कर रहा था ? तुम्हारे साथी और सहायक गण कहां है ? निस्संकोच बताओ। तुम्हारे आर्तस्वर पर ही मैंने इधर देखा और परिस्थिति का

अनुमान कर इस नीच पर बाण चलाया था।'

राजकुमारी ने कालकेतु की ओर दृष्टिपात किया—'उसके वक्ष में एक बाण धँसा हुआ रक्तपात कर रहा है।' आगन्तुक के लक्ष्यवेध पर आश्चर्य हुआ। उसकी ओर ध्यान से देखा—आकर्षक श्याम वर्ण, प्रदीप्त मुखमण्डल, तेजोमय नेत्र, मस्तक पर श्रमबिंदु और अधरों पर तारुण्य सुलभ एक शौर्यपूर्ण स्मिति।

उसके नारीत्व को जान पड़ा – साकार पुरुष यहो है। विनत भाव से बोली—'आपकी कृतज्ञ हूँ। यह दस्युराज कालकेतु है। उसके सहायकों में एक मेरे राज्य का निर्वासित नागरिक है। प्रतिशोध की भावना से इसने मेरे विरुद्ध दस्यु दल की स्थापना की है। मैं मालव राजकुमार यशोधन की छोटी बहन हूँ। ज्योतिषी जी ने नामकरण किया है नागमणि। वन–बिहार के लिए अकेली ही चली आई थी।' फिर एक मृदु मुस्कान के साथ कहा—'यदि आपका बाण मुझे लग जाता तो ?'

'मुझे अपने धनुष पर विश्वास है राजकुमारी। किंतु आप इस प्रकार अकेली, वन-भ्रमण में विपत्ति की कल्पना से मुक्त कैसे चली आईं ?'

'मुझे अपने गरुड़ पर विश्वास है। जब तक मैं इस पर आसीन हूं, विपत्ति मुझे छू न सकेगी। आपका परिचय ?'

युवक ने देखा—राजकुमारी में रूप है, शौर्य है, साहस

है और नारीत्व भी। यह अबला नहीं सबला है। सचमुच यह क्षत्रिय कन्या है। कितना तेज है इसके दिव्य आनन पर! बोला—'मैं काशी का बलवन्त हूँ। पिता जी की आज्ञानुसार द्वारकापुरी के मन्दिर में कुछ पत्र पुष्प अर्पण करने गया था। साथी संगी राज पथ पर हैं। मैं एक मृग के पीछे इधर चला आया था।'

'अरे, आप ही हैं काशी कुमार बलवन्तराव! पिता जी से कई बार आपका युद्ध कौशल सुन चुकी हूँ। आज दर्शन भी हो गये, सौभाग्य। अब आज्ञा दीजिये, चलूँगी।'

'मेरी कृपाण आप लेती जायें। निःशस्त्र रहना उचित नहीं। चलिये, सीमा तक पहुँचा दूं।'

'हृदय से आभारी हूँ। कष्ट न करें। मैं सुरक्षित चली जाऊँगी।' कृपाण लेते हुये राजकुमारी ने कहा—'यह आपकी स्मृति रहेगी।'

'किंतु मेरे पास?'

'यह मेरी स्मृति रहेगी।' राजकुमारी ने अपना मुक्ता-हार देते हुये कहा।

कुमार बलवन्तराव ने माला धारण कर स्मित भाव से कहा—'यदि रुष्ट न हों तो एक प्रश्न करूं—क्या आप माला समर्पण का अर्थ जानती हैं?'

वैसी ही आल्हादपूर्ण मुद्रा में राजकुमारी ने कहा—'जानती हूँ। आप चिंता न करें। मैं कुमारी ही हूँ और

अपने पर मुझे पूर्ण अधिकार है ।'

'पुनर्दर्शन की आशा कब करूं ?'

'कभी सुना था, पिता जी आपको बुलाने वाले हैं । तभी कुछ सम्भव हो सकेगा ।'

'मेरे योग्य कोई सेवा ?'

'सब कृपा है । इस दुष्ट ने कई राज्यों में घोर अशांति उत्पन्न कर रखी है । प्रतिकार आवश्यक है । इसके दल का मूलोच्छेदन करना ही होगा । इसका संगठन सूत्र अन्तर्राज्यीय हो गया है । पिता जी सामूहिक आक्रमण की चर्चा कर रहे थे ।'

'तो इसे अभी ले चलकर पिता जी के पास पहुंचा दूं । पश्चात् दल भी छिन्न भिन्न हो जायेगा ।'

'इस क्षण यह अर्धमृत है और असहाय भी । साथी संगी सब इसे त्याग कर पलायन कर गये हैं । युद्ध क्षेत्र में सदल इसका दमन करना ही उचित होगा । आप तो राजनीति भलीभाँति जानते ही हैं ।' स्मित मुद्रा में राजकुमारी ने वाक्य पूर्ण किया ।

'यही कीजिये । वैसे जब आपके राज्य को आवश्यकता हो, स्मरण कीजियेगा । मेरी सेवायें सदैव ही मालव राज्य के हेतु प्रस्तुत हैं । महाराज से मेरा प्रणाम और कुमार यशोधन को बधाई कह दीजियेगा । खेद है कि मैं उन दिनों कर्नाटक गया हुआ था अतः स्वयम्बर में उपस्थित होकर उन्हें अपनी शुभकामनायें अर्पित नहीं कर सका । कुमारी सुषमा

कैसी हैं ?'

'सुषमा सुषमा ही हैं और क्या कहूं । हमारा परिवार उनसे पूर्णतया संतुष्ट है ।'

'आपको विलम्ब होगा । विदा दीजिए ।'

और उत्तर में राजकुमारी, कुमार बलवन्तराव के सम्मुख आत्मसमर्पण की भावना से नतमस्तक हो गयी ।

९

सहिष्णुता और प्रतीक्षा में तीन वर्ष का समय व्यतीत हो गया। इस अवधि में कालकेतु ने छोटे बड़े अनेक आक्रमण किये। सिंधु, नर्मद, मालव, कोशल और अवन्ति तक उसका आतंक व्याप्त हो गया। यात्री वर्ग की सुरक्षा संदिग्ध हो गयी। व्यवसायी प्रायः आर्थिक हानि एवं आक्रमण के लक्ष्य बनते। अनेक संभ्रान्त परिवारों के शिशु अपहृत होचुके थे, जिनकी मुक्ति के लिये कालकेतु का दल असीम धनराशि प्राप्त करता। समस्त उत्तर भारत में असुरक्षा की भावना व्याप्त हो गयी थी।

अरावली ही दस्युदल का केन्द्र था अतः मालव नरेश अरिन्दम ने सर्वसम्मति से सामूहिक आक्रमण द्वारा उसे विनष्ट करने की योजना बनाई। उत्तर भारत के समस्त राज्यों ने सहयोग दिया। अंततः ख्यातिप्राप्त युद्ध विशारदों के संरक्षण में, समस्त उपकरणों से युक्त एक विशाल सेना ने शुभवेला

में अरावली की ओर प्रस्थान किया। प्रयाण वेला में ब्राह्मणों ने स्वस्ति पाठ किया। नारियों ने मंगल गीत गाये। तांत्रिकों ने साधन किये और जन सामान्य ने शुभ कामनायें अर्पित कीं। समस्त सेना का नेतृत्व काशिराज के सुपुत्र कुमार बलवन्तराव ने ग्रहण किया। उनकी सहायतार्थ कुमार यशोधन साथ थे। विदा वेला में महाराज अरिन्दम ने दोनों को शुभाशीष देते हुये शिरस्पर्श किया—'वत्स, जाओ। युद्ध में अदम्य साहस, अनुपम शौर्य और अक्षय कीर्ति का वरण करना। विजय तुम्हें सदा सर्वदा सुलभ रहेगी।' फिर कुमार बलवंतराव से कहा—'पुत्र, मुझ पर एक भार है। सोचता हूं, तुम्हीं उसे वहन कर सकने में समर्थ होगे। दस्यु दमन करके लौट आओ तो काशिराज को आमन्त्रित कर उनकी सेवार्थ अपना पत्र पुष्प अर्पित कर दूं।' भावावेग में महाराज गद्‌गद् हो उठे।

दोनों राजकुमारों ने उनकी चरण रज ली। ब्राह्मणों को प्रणाम किया और शंखध्वनि तथा जय जयकार के मध्य उस विशाल चतुरंगिनी ने अरावली की ओर प्रस्थान किया।

* * *

तेईसवें दिन का युद्ध असाधारण था। कुमार यशोधन की व्यूह रचना ने दस्यु दल को चतुर्दिक से आबद्ध कर रखा था। किसी को पलायन का मार्ग न मिल रहा था। कुमार

का आक्रामक वृत्त प्रति दिन संकुचित होता जा रहा था और दस्यु वर्ग उसमें इस प्रकार सिमट रहा था जैसे यमराज ने मृत्युपाश में आबद्ध कर लिया हो। केशव पांचवें दिन ही मारा जा चुका था। अन्य कई दुर्दान्त दस्यु मृत्यु-ग्रास बन चुके थे। किंतु कालकेतु अब भी शेष था। वह व्यूह के मध्य केन्द्र स्थान में छिपा बैठा था। आक्रमण की प्रबलता ने उसका साहस एक बार पुनः जगाया और तेईसवें दिन वह प्राणों का मोह त्याग कर अपने एक सहस्र साथियों सहित युद्ध क्षेत्र में आ उपस्थित हुआ।

बड़ी देर तक भीषण युद्ध होता रहा। धरती रक्तिम हो गयी, किंतु दस्यु दल ने पराजय स्वीकार न की। भीषणता उत्तरोत्तर बढ़ रही थी। अंततः कालकेतु ने कूटनीति का आश्रय लिया। कुमार यशोधन को पुकारा—'ओ संपोलिये ! मेरे साथ मल्लयुद्ध कर। व्यर्थ ही सैनिकों की हत्या से क्या लाभ ? यदि मैं पराजित हो गया तो मेरी सारी सेना आत्म-समर्पण कर देगी।

कुमार यशोधन साक्षात मृत्यु दूत की भाँति युद्ध रत थे। उनका अश्व जिस ओर अग्रसर होता, रणक्षेत्र शून्य हो जाता। कालकेतु का आह्वान सुनकर उसकी ओर दौड़े। कुमार बलवन्तराव कुछ अलग युद्ध व्यस्त थे। देखकर शीघ्रतापूर्वक उनके पास आये और कहा—'भाई, इन दुष्टों का विश्वास करना उचित नहीं है। तुम्हें राजकुमारी सुषमा

का भी ध्यान रखना चाहिए। मेरे स्थान पर जाओ। मैं इस दुष्ट का पराक्रम देखूंगा।' कहते हुये वे घोड़े पर से उतर पड़े।

कुमार यशोधन ने उन्हें रोका–'मेरे रहते आप इस प्रकार संकट में न पड़ें। आपकी कृपा से मैं इसे सहज ही पराजित कर लूंगा।' उन्होंने भी उतरने का उपक्रम किया।

युद्ध चरम सीमा पर था। एक एक क्षण प्रलय काल था। काशी कुमार ने उन्हें पुनः रोका--'मैं महाराज से तुम्हारी रक्षा की शपथ लेकर आया हूं। भाई, मेरे रहते तुम सुरक्षित ही रहो।'

मालव कुमार ने अनुनय की -'विलम्ब न कीजिये। आपके साथ मेरी प्राणप्रिय बहन नागमणि का जीवन सम्बद्ध है। आप इधर आइये। मैं स्वयं मल्लयुद्ध में जाऊंगा।'

समय न था। कालकेतु निकट आ गया था। वह निरन्तर अपने सैनिकों को उत्साहित कर रहा था। ठीक सामने आते ही उसने दोनों राजपुत्रों को शपथ दी--'राजमाता की सन्तान हो तो आओ।'

और अविलम्ब कुमार बलवन्तराव ने दौड़ कर उसे

बाहुपाश में आबद्ध कर लिया। उनमें आत्म बल था और दस्यु में शारीरिक । उनके परस्पर आघातों से तड़ित ध्वनि सी उत्पन्न हो रही थी। दोनों ओर की सेनायें रक्त-पिपासु मुद्रा में खड़ी जय जयकार कर रहीं थीं। बाहर अब भी पूर्ववत् संघर्ष हो रहा था। कुछ क्षणों के पश्चात् कालकेतु ने कुमार को नीचे कर लिया और निकट था कि उन्हें चित्त कर देता। तभी विद्युत गति से कुमार ने अपने को उसके बाहुंपाश से मुक्त कर लिया और शीघ्रतापूर्वक ऊपर आकर उसके हाथ पैर समेट लिये। क्रोध की अंतिम सीमा प्राणघातक हो जाती है। कुमार ने दस्यु को अपनी ऊंचाई तक उठाकर भूमि पर पटक दिया और बलपूर्वक उसके वक्ष पर आसीन हो गये।

कालकेतु पराजित हो गया। दस्यु सेना ने आत्मसमर्पण कर दिया और राजकीय सैनिकों ने उसे बन्दी बनाकर राजधानी की ओर प्रस्थान किया।

विजय का समाचार सेनाओं के पूर्व ही राज्यों में पहुंच चुका था। महाराज अरिन्दम ने दोनों कुमारों के स्वागत का आदेश दिया। नगर से एक योजन बाहर तक सेना की प्रतीक्षा में अनेक सुविधायें प्रस्तुत की गयीं। तोरणों और बन्दनवारों से नगर को सुसज्जित किया गया। सर्वत्र अगरु एवं चंदन की सुवास प्रसारित की गयी। प्रत्येक द्वार पर मंगल कलश स्थापित किये गये और निश्चित हुआ कि

विजय के उपलक्ष्य में पुरस्कार वितरण के पश्चात् शीघ्र ही किसी शुभ वेला में काशी कुमार बलवन्त-राव के साथ राजकुमारी नागमणि का विवाह कर दिया जायेगा।

१०

नर्मदा के पावन तट पर स्मशान की अपावन भूमि और अर्धरात्रि का नीरव अंधकार। एक युवती एक प्रौढ़ व्यक्ति के साथ कुछ खोज रही थी। प्रौढ़ कह रहा था—'राजकुमारी दुर्दान्त दस्यु कालकेतु का दमन करने हेतु सिंधुराज के संरक्षण में समस्त उत्तरभारत की प्रादेशिक सेनाओं ने उसपर आक्रमण किया। इस विशालवाहिनी का नेतृत्व काशी के राजकुमार बलवंतराव कर रहे थे। अरावली के गहन बन में भीषण संघर्ष हुआ। कालकेतु ने दोनों कुमारों को मल्लयुद्ध के हेतु आह्वान किया। कुमार यशोधन को सुरक्षित रखकर काशी कुमार ने अकेले ही उसे पटक कर मार डाला। देहयष्टि और शक्ति में वह कुमार से अधिक था फिर भी अपने मनोबल के आधार पर वे विजयी हुये। सारी शत्रुसेना बंदी बना ली गयी। किंतु लौटते समय किसी दुष्ट ने अचानक कुमार पर बाण का प्रहार कर दिया जो उनके कंठ भाग में जा लगा। बाण का अग्रभाग विष-संयुक्त था। उसके प्रभाव से कुमार अपनी रक्षा न कर

सके और मार्ग में ही देवलोक को प्रस्थान कर गये। महाराज ने अत्यधिक शोकाकुल होकर भी पूर्ण राजकीय एवं सैनिक सम्मान के साथ यहाँ उनकी भौतिक काया अग्निदेव को अर्पित की। वह देखो-जयध्वजा लहरा रहा है। महाराज ने इसे चिता स्थली पर ही लगाया है। यहां कुमार बलवंतराव की स्मृति में विशाल लौह स्तंभ स्थापित किया जायेगा।'

राजकुमारी नागमणि मौनभाव से अपने आराध्य की कीर्तिगाथा सुन रही थी। हृदय उद्विग्न था और नेत्र आर्द्र। कुछ ही पग आगे कुमार की चिता शाँत भाव से सो रही थी। राजकुमारी दौड़कर उसमें लोट गयी और शरीर को भस्माभिभूत करते हुये कहने लगी–'प्रियतम, सखियों के कहने पर भी मैंने कभी श्रृङ्गार नहीं किया था। सोचती थी-जब तुम मेरी मांग में सिंदूर भरोगे तभी श्रृङ्गार करूंगी। पिता जी का दृढ़ निश्चय था कि अरावली से लौटने पर मुझे तुमको समर्पित कर देंगे। किंतु विधाता ने स्वीकार नहीं किया। तनिक देर प्रतीक्षा करो। श्रृङ्गारपूर्ण कर स्वयं ही तुम्हारे पास आ रही हूं।'

उसने अतिशय श्रद्धा और प्रेम के साथ एक चुटकी चिता भस्म माँग में भर ली और वृद्ध को संबोधित किया—

'सुदर्शन दादा ! मेरी मांग भर चुकी है। अब मैं कुमारी नहीं हूं। किंतु यहाँ भी रहने की मेरी इच्छा नहीं है। जाती हूं अपने स्वामी के पास। मेरी काया को नर्मदा की गोद में अर्पित करके तुम घर जाकर पिता जी से कह देना कि मेरे

लिए दुखी न हों। मैं बहुत प्रसन्न हूं। भाई यशोधन और माता जी को भी धैर्य देना ताकि मेरी चंचलता की स्मृति उन्हें कभी पीड़ित न कर सके। और दादा ! सबके अंत में तुमसे अपने अपराधों की क्षमा-याचना कर रही हूं। यदि मुझ पर प्रसन्न हो तो दादा, ऐसा करना कि मालव जनता राजकुमारी नागमणि को स्मरण कर कभी दुखी न हो। बस, अब विदा ॐ शाँति !'

'अरे बेटी ! राजकुमारी !! ओ मणि !!! तुम क्या कर रही हो ? मैं महाराज के समीप कौन सा मुंह लेकर जाऊंगा। ? ठहरो !' वृद्ध सुदर्शन के नेत्र अंधकार में विस्फारित हो उठे। तभी एक बड़ा सा तारा टूट कर दक्षिण दिशा की ओर दौड़ता हुआ अनन्त में विलीन हो गया।

वृद्ध ने स्पर्श करके देखा—राजकुमारी कुछ अस्थि अवशेष अंक में लिए ध्यानस्थ बैठी है। उसने आकुलतापूर्वक अवरुद्ध कण्ठ से पुकारा—'राजकुमारी ! उठो, चलो !!'

किंतु वह पार्थिव काया सर्वथा मौन, निश्चल और निष्प्राण हो चुकी थी।

समाप्त